उत्कर्ष प्रतिष्ठान, लखनऊ

दृश्य कला की छमाही पत्रिका, अक्टूबर 2000

उत्कर्ष प्रतिष्ठान, लखनऊ

योगेन्द्र नारायण
मुख्य सचिव

दूरभाष का 221599 238212
फैक्स 0522 239283
उत्तर प्रदेश शासन
सचिवालय एनेक्सी भवन
लखनऊ – 226001
e-mail csup@lw1 vsnl net in

दि 12 9 2000

संदेश

'उत्कर्ष प्रतिष्ठान' कला क्षेत्र मे अपनी नियमित गतिविधियो के माध्यम से रचनात्मक योगदान देते हुए जन–सामान्य मे कला अभिरुचि जागृत करने के साथ ही अनेक कलाकारो को स्थापित करने का श्रेय प्राप्त कर चुका है विशेषकर युवा कलाकारो को। प्रसन्नता है कि अब कला के सैद्धातिक पक्ष को भी एक नया आयाम देने के लिए 'दीर्घा' षटमासिक पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ कर सस्थान ने विशिष्ट कार्य किया है। इस उल्लेखनीय कार्य के लिए पत्रिका से सबधित पूरी टीम को बधाई।

आशा है कि पत्रिका के नियमित प्रकाशन से कला क्षेत्र मे हो रहे अनुसधानो परिवर्तित होती प्रवृत्तियो तथा सौदर्यशास्त्रीय मूल्यो से परिचित हो कला–समाज व जन–सामान्य लाभान्वित होगे और मौलिक कला–साहित्य के अभाव की पूर्ति हो सकेगी।

(डा योगेन्द्र नारायण)

रेखाकन 1963 – वीरेन्द्र सिह राही

रेखाकन– बद्रीनाथ आर्य

पत्रिका में प्रकाशित सामग्री से सपादक का सहमत होना आवश्यक नही है।

'दीर्घा' का प्रकाशन वर्ष में दो बार अक्टूबर तथा अप्रैल माह मे किया जाएगा।

सपादक

अवधेश मिश्र

सपादकीय कार्यालय

12/179 इन्दिरा नगर लखनऊ — 226016

दूरभाष 0522 358007 358026

सह—सपादक

डा शेफाली भटनागर

आवरण सज्जा

एस जी श्रीखण्डे

मुख पृष्ठ चित्र

आर. बी. सेठ

स्वप्न अभियास जलरग 90 x 70 सेमी एक्से न 98 925 1

राज्य ललित कला अकादमी उ प्र के सौजन्य से

ले—आउट

अवधेश मिश्र

प्रस्तुति सहायक

साहब बक्स, सर्वेश मिश्र

मूल्य : रुपये 100 मात्र

प्रकाशक

श्रीमती अजू सिन्हा

प्रकाशन कार्यालय

उत्कर्ष प्रतिष्ठान, 1/95, विनीत खण्ड, गोमती नगर लखनऊ

दूरभाष . 0522-393745

मुद्रक

प्रकाश पैकेजर्स, 257—गोलागंज, लखनऊ—226018

ानन्द महापात्र

योगेन्द्र नारायण
मुख्य सचिव

दूरभाष का 221599 238
फैक्स 0522 239283
उत्तर प्रदेश शासन
सचिवालय एनेक्सी भवन
लखनऊ – 226001
e-mail csup@lw1 vsnl net

दि 12 9 2000

संदेश

'उत्कर्ष प्रतिष्ठान' कला क्षेत्र मे अपनी नियमित गतिविधियो के माध्यम से रचनात्मक योगदान देते हुए जन–सामान्य मे कला अभिरुचि जागृत करने के साथ ही अनेक कलाकारो को स्थापित करने का श्रेय प्राप्त कर चुका है विशेषकर युवा कलाकारो को। प्रसन्नता है कि अब कला के सैद्धातिक पक्ष को भी एक नया आयाम देने के लिए 'दीर्घा' षटमासिक पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ कर सस्थान ने विशिष्ट कार्य किया है। इस उल्लेखनीय कार्य के लिए पत्रिका से सबधित पूरी टीम को बधाई।

आशा है कि पत्रिका के नियमित प्रकाशन से कला क्षेत्र में हो रहे अनुसधानो परिवर्तित होती प्रवृत्तियो तथा सौंदर्यशास्त्रीय मूल्यो से परिचित हो कला–समाज व जन–सामान्य लाभान्वित होगे और मौलिक कला–साहित्य के अभाव की पूर्ति हो सकेगी।

(डा योगेन्द्र नारायण)

रेखाकन 1963 – वीरेन्द्र सिह राही

पत्रिका में प्रकाशित सामग्री से सपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

'दीर्घा' का प्रकाशन वर्ष में दो बार अक्टूबर तथा अप्रैल माह में किया जाएगा।

सपादक

अवधेश मिश्र

सपादकीय कार्यालय,

12/179 इन्दिरा नगर लखनऊ – 226016

दूरभाष 0522 358007, 358026

सह–सपादक

डा शेफाली भटनागर

आवरण सज्जा

एस जी श्रीखण्डे

मुख पृष्ठ चित्र

आर. बी सेठ

स्वप्न अभियास जलरग 90 x 70 सेमी एक्से न 98 925 1

राज्य ललित कला अकादमी उ प्र के सौजन्य से

ले–आउट

अवधेश मिश्र

प्रस्तुति सहायक

साहब बक्श, सर्वेश मिश्र

मूल्य : रुपये 100 मात्र

प्रकाशक

श्रीमती अनु मिश्रा

प्रकाशन कार्यालय

उत्कर्ष प्रतिष्ठान, 1/95, विनीत खण्ड, गोमती नगर लखनऊ

दूरभाष : 0522-393745

मुद्रक

प्रकाश पैकेजर्स 257–गोलागंज लखनऊ–226018

...नन्द महापात्र

योगेन्द्र नारायण
मुख्य सचिव

दूरभाष का 221599 238
फैक्स 0522 239283
उत्तर प्रदेश शासन
सचिवालय एनेक्सी भवन
लखनऊ – 226001
e-mail csup@lw1 vsnl net

दि 12 9 2000

संदेश

'उत्कर्ष प्रतिष्ठान' कला क्षेत्र मे अपनी नियमित गतिविधियो क माध्यम से रचनात्मक योगदान देते हुए जन–सामान्य मे कला अभिरुचि जागृत करने के साथ ही अनेक कलाकारो को स्थापित करने का श्रेय प्राप्त कर चुका है विशेषकर युवा कलाकारो को। प्रसन्नता है कि अब कला के सैद्धातिक पक्ष को भी एक नया आयाम देने के लिए 'दीर्घा षटमासिक पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ कर सस्थान ने विशिष्ट कार किया है। इस उल्लेखनीय कार्य के लिए पत्रिका से सबधित पूरी टी को बधाई।

आशा है कि पत्रिका के नियमित प्रकाशन से कला क्षेत्र में हो र अनुसधानो परिवर्तित होती प्रवृत्तियो तथा सौदर्यशास्त्रीय मूल्यो परिचित हो कला–समाज व जन–सामान्य लाभान्वित होगे और मौलि कला–साहित्य के अभाव की पूर्ति हो सकेगी।

(डा योगेन्द्र नारायण

रेखाकन 1963 – वीरेन्द्र सिह राही

मिथिला की लोक चित्र शैली

*प्रो श्याम शर्मा **

मिथिलाचल क्षेत्र

मिथिलाचल क्षेत्र नेपाल की तराई मे बसा शान्तिप्रिय क्षेत्र है। यहॉ की भूमि उपजाऊ है। इसी कारण यह क्षेत्र धान मखाना और पान के लिए प्रसिद्ध है। यहॉ शैव शाक्त ओर वैष्णवो के साथ–साथ अन्य धर्मो सम्प्रदायो के लोग भी रहते हैं। बगाल के समीप होने के कारण यहा की सस्कृति पर कुछ बगाली प्रभाव है। यहॉ के निवासी धर्मपरायण और कर्मठ है। इसी कारण यहॉ कला और सस्कृति का समुचित विकास हुआ है। सस्कृत के विद्वान मडन मिश्र और लोककवि विद्यापति के आलावा अनेक विद्वान कर्मनिष्ठ इसी भूमि की देन है।

प्राचीन काल से ही यह क्षेत्र सम्पूर्ण भारत मे कला–सस्कृति का केन्द्र रहा है। पौराणिक काल मे राजा जनक की राजधानी मिथिला थी । राजा जनक की पुत्री सीता के विवाह के समय इस पूरी नगरी को यहॉ की स्त्रियो ने चित्रमय बना दिया था। विवाह के समय सुन्दर कोहबर' चित्राकित किए गए थे। इस चित्राकन कला मे मिथिला की स्त्रियो का आज भी वर्चस्व है। आर्य सस्कृति यहॉ पूर्ण विकसित थी। यही पर मुनि याज्ञवल्क्य का निवास था। न्यायशास्त्र के विद्वान गौतम कपिल मुनि ऋषि श्रग्य शतानन्द मण्डन मिश्र आदि महापण्डितो के साथ गार्गी मैत्रेयी लक्षिमा देवी विश्वास देवी तथा वेदवती जैसी विदुषी स्त्रियो ने मिथिला के वर्तमान सामाजिक आध्यात्मिक जीवन तथा सास्कतिक उत्थान के लिए कार्य किया। कालातर मे मिथि नामक के एक शासक का यहॉ राज्य हुआ। उसने एक नगर बसाकर उसे कलात्मकता प्रदान की । बाद मे इसी क्षेत्र का नाम मिथिला पडा । सन 1097 मे नान्यदेव के समय यहॉ कर्णट वश का शासन स्थापित हुआ और राम सिह देव शिव सिह लाखिमा विश्वास देवी कस नारायण आदि का राज्य हुआ। चौदहवी– पन्द्रहवी शताब्दी मे महाकवि विद्यापति के लोक गीतो से मिथिलाचल प्रभावित होने लगा। इसी क्रम मे यहॉ लोक कला और लोक शिल्पो का विकास हुआ। इस क्षेत्र मे चित्राकन के साथ–साथ लोक शिल्पो का भी महत्वपूर्ण स्थान है। शिल्पो का उपयोग सस्कारो के समय होता है। प्राचीन काल से लेकर अब तक यहॉ का समाज सस्कारो से बँधा है। सस्कारो मागलिक पर्वो विवाह उत्सवो के समय लोक चित्राकन का होना महत्वपूर्ण माना जाता है।

मिथिला क्षेत्र मे शैव शाक्त वैष्णव सम्प्रदायो का सुमेल है। यहॉ के समाज मे चित्रकला जीवन का अग है। अत महिलाऍ समय निकाल कर अपनी–अपनी रूचि के अनुसार चित्रो के विषय चुनकर चित्र रचना करती है। जैसे–शिव विवाह गौरी पूजन शिव परिवार आदि शक्ति के चित्रण मे मॉ काली भगवती दुर्गा महिषासुर मर्दनी आदि वैष्णव चित्रो मे रामकथा पर आधारित राम सीता विवाह राम लक्ष्मण सीता का वन गमन पुष्प–वाटिका मे सीताजी और कृष्ण चरित्र मे राधा–कष्ण कालीय मर्दन गोपियो के बीच कृष्ण आदि। महाकवि विद्यापति एव अन्य मैथिली भक्तो के गीतो पर भी यहॉ चित्राकन होता है।

मिथिलाचल क्षेत्र की सास्कृतिक धरोहर मे यहॉ की लोक कला और शिल्प अग्रणी है। अब स्त्रियो के साथ–साथ यहॉ पुरुष भी चित्राकन करने लगे है। उपयोगी शिल्पो के निर्माण मे यहॉ का पुरूष वर्ग सक्रिय है। यहॉ अर्थोपार्जन के बाद जो समय मिलता है उसमे चित्र रचना होती है।

मिथिला की लोककला

मिथला क्षेत्र मे कला की अभिव्यक्ति माध्यमो के अनुसार प्राय चार प्रकार से हुई है।

- क– भूमि चित्रण (अरिपन)
- ख– भित्ति चित्रण (कोहबर)
- ग– पट चित्रण
- घ– तात्रिक चित्रकला

भूमि चित्रण– (अरिपन)

भारतवर्ष मे भूमि अलकरण की प्रथा वैदिक युग से मानी जाती है। ब्राह्मण कमकाण्ड तथा बाद मे तत्र साधना के समय इसके रूप मे परिवर्तन आ गया और समयानुसार यह हमारे रीति–रिवाज सस्कारो का अग बन गई। अलग–अलग प्रदेश मे यह भिन्न–भिन्न नामो और रूपो मे देखी जा सकती है। जैसे–उत्तर प्रदेश के बृज क्षेत्र मे यह सॉझी पहाडी क्षेत्र मे ऑजी गुजरात मे साथिया राजस्थान मे मॉडना महाराष्ट्र मे रगोली आध्र प्रदेश मे सुग्गु दक्षिण भारत मे कोलम् बगाल तथा असम प्रदेश मे अल्पना तथा कही–कही चौक पूरना भी कहते हैं।

** भूतपूर्व प्राचार्य कला एव शिल्प महाविद्यालय पटना स्टूडियो– 2A 135 न्यू पाटलिपुत्र कालोनी पटना–800 013*

मिथिला की लोक चित्र शैली

*प्रो श्याम शर्मा **

मिथिलाचल क्षेत्र

मिथिलाचल क्षेत्र नेपाल की तराई मे बसा शान्तिप्रिय क्षेत्र है। यहॉ की भूमि उपजाऊ है। इसी कारण यह क्षेत्र धान मखाना और पान के लिए प्रसिद्ध है। यहॉ शैव शाक्त ओर वैष्णवो के साथ–साथ अन्य धर्मो सम्प्रदायो के लोग भी रहते हैं। बगाल के समीप होने के कारण यहा की सस्कृति पर कुछ बगाली प्रभाव है। यहॉ के निवासी धर्मपरायण और कर्मठ हैं। इसी कारण यहॉ कला और सस्कृति का समुचित विकास हुआ है। सस्कृत के विद्वान मडन मिश्र और लोककवि विद्यापति के आलावा अनेक विद्वान कर्मनिष्ठ इसी भूमि की देन है।

प्राचीन काल से ही यह क्षेत्र सम्पूर्ण भारत मे कला–सस्कृति का केन्द्र रहा है। पौराणिक काल मे राजा जनक की राजधानी मिथिला थी । राजा जनक की पुत्री सीता के विवाह के समय इस पूरी नगरी को यहॉ की स्त्रियो ने चित्रमय बना दिया था। विवाह के समय सुन्दर कोहबर चित्राकित किए गए थे। इस चित्राकन कला मे मिथिला की स्त्रियो का आज भी वर्चस्व है। आर्य सस्कृति यहॉ पूर्ण विकसित थी। यही पर मुनि याज्ञवल्क्य का निवास था। न्यायशास्त्र के विद्वान गौतम कपिल मुनि ऋषि श्रग्य शतानन्द मण्डन मिश्र आदि महापण्डितो के साथ गार्गी मैत्रेयी लक्षिमा देवी विश्वास देवी तथा वेदवती जैसी विदुषी स्त्रियो ने मिथिला के वर्तमान सामाजिक आध्यात्मिक जीवन तथा सास्कतिक उत्थान के लिए कार्य किया। कालातर मे मिथि नामक के एक शासक का यहॉ राज्य हुआ। उसने एक नगर बसाकर उसे कलात्मकता प्रदान की । बाद मे इसी क्षेत्र का नाम मिथिला पडा । सन 1097 मे नान्यदेव के समय यहॉ कर्णट वश का शासन स्थापित हुआ और राम सिह देव शिव सिह लाखिमा विश्वास देवी कस नारायण आदि का राज्य हुआ। चौदहवी– पन्द्रहवी शताब्दी मे महाकवि विद्यापति के लोक गीतो से मिथिलाचल प्रभावित होने लगा। इसी क्रम मे यहॉ लोक कला और लोक शिल्पो का विकास हुआ। इस क्षेत्र मे चित्राकन के साथ–साथ लोक शिल्पो का भी महत्वपूर्ण स्थान है। शिल्पो का उपयोग सस्कारो के समय होता है। प्राचीन काल से लेकर अब तक यहॉ का समाज सस्कारो से बॅधा है। सस्कारो मागलिक पर्वो विवाह उत्सवो के समय लोक चित्राकन का होना महत्वपूर्ण माना जाता है।

मिथिला क्षेत्र मे शेव शाक्त वैष्णव सम्प्रदायो का सुमेल है। यहॉ के समाज मे चित्रकला जीवन का अग है। अत महिलाऍ समय निकाल कर अपनी–अपनी रूचि के अनुसार चित्रो क विषय चुनकर चित्र रचना करती है। जैसे–शिव विवाह गौरी पूजन शिव परिवार आदि शक्ति के चित्रण मे मॉ काली भगवती दुर्गा महिषासुर मर्दनी आदि वैष्णव चित्रो मे रामकथा पर आधारित राम सीता विवाह राम लक्ष्मण सीता का वन गमन पुष्प–वाटिका मे सीताजी और कष्ण चरित्र मे राधा–कृष्ण कालीय मर्दन गोपियो के बीच कृष्ण आदि। महाकवि विद्यापति एव अन्य मैथिली भक्तो क गीतो पर भी यहॉ चित्राकन होता है।

मिथिलाचल क्षेत्र की सास्कृतिक धरोहर मे यहॉ की लोक कला और शिल्प अग्रणी हे। अब स्त्रियो के साथ–साथ यहॉ पुरुष भी चित्राकन करने लगे है। उपयोगी शिल्पो के निर्माण मे यहॉ का पुरूष वर्ग सक्रिय है। यहॉ अर्थोपार्जन के बाद जो समय मिलता है उसमे चित्र रचना होती है।

मिथिला की लोककला

मिथला क्षेत्र मे कला की अभिव्यक्ति माध्यमो के अनुसार प्राय चार प्रकार से हुई है।

क– भूमि चित्रण (अरिपन)

ख– भित्ति चित्रण (कोहबर)

ग– पट चित्रण

घ– तात्रिक चित्रकला

भूमि चित्रण– (अरिपन)

भारतवर्ष मे भूमि अलकरण की प्रथा वैदिक युग से मानी जाती है। ब्राह्मण कमकाण्ड तथा बाद मे तत्र साधना के समय इसके रूप मे परिवर्तन आ गया और समयानुसार यह हमारे रीति–रिवाज सस्कारो का अग बन गई। अलग–अलग प्रदेश मे यह भिन्न–भिन्न नामो और रूपो मे देखी जा सकती है। जैसे–उत्तर प्रदेश के बृज क्षेत्र मे यह सॉझी पहाडी क्षेत्र मे ऑजी गुजरात मे साथिया राजस्थान मे मॉडना महाराष्ट्र मे रगोली आध्र प्रदेश मे सुग्गु दक्षिण भारत मे कोलम बगाल तथा असम प्रदेश मे अल्पना तथा कही–कही चौक पूरना भी कहते हैं।

** भूतपूर्व प्राचार्य कला एव शिल्प महाविद्यालय पटना स्टूडियो– 2A 135 न्यू पाटलिपुत्र कालोनी पटना–800 013*

सूर्य देवता – मिथिला शैली

बिहार के मिथिलाचल मे भूमि अलकरण की प्रथा अति प्राचीन है। यहाँ इसे अश्विन के नाम से भी जाना जाता है। यह रचना मागलिक पर्वों विवाह के समय लोकोत्सवो के समय स्त्रियो या कुँवारी कन्याओ द्वारा रची जाती है। भूमि को गोबर–मिटटी से लीपकर या पक्की जमीन को धो पोछकर उसके ऊपर भीगे चावलो को पीसकर पीथर या चौरठ बनाया जाता है। इसे रगीन बनाने के लिए जलरगो को इसमे मिला दिया जाता है। मागलिक पर्वों पर सूखे सिदूर का प्रयोग आवश्यक है।

मिथिला क्षेत्र मे प्रत्येक उत्सव या पर्व के समय परम्परागत रूप से पूर्व निश्चित अरिपन ही बनता है। उसमे प्रयोग होने वाली आकृतियॉ भी पूर्व निश्चित होती हैं। जैसे– विवाह के समय बनने वाले आश्विन या आसिन मे कमल मछली पुरइन के पत्ता बॉस आदि। ये सभी चिन्ह विवाह के बाद वश वृद्धि के प्रतीक है। सत्यनारायण पूजा के अवसर पर अष्ट–दल कमल विष्णु पद शख चक गदा पदम आदि आकतियो का अकन होता है। लक्ष्मी पूजा के समय त्रिकोणात्मक अरिपन की प्रथा है। दशहरे पर कोसा अरिपन नाग पचमी पर नागफण अरिपन और भ्रातृ द्वितीया पर गोलाकार अरिपन बनाने का विधान है। इसके अतिरिक्त तुषरी पूजा चौठ–चन्द्र मधु श्रावणी लवान (हल पूजा) पर अलग–अलग प्रकार के अरिपन बनाने का प्रचलन है। भूमि अलकरण का कार्य प्राय घर की महिला या कुँवारी कन्या ही बनाती है।

मिथिला क्षेत्र मे तत्र साधना के लिए भी भू–अलकरण किया जाता रहा है। यह चित्रण कुछ सिद्धहस्त तात्रिको द्वारा ही होता है जिसमे कर्मकाण्ड के समय भूमि पर ज्यामितीय आकृतियॉ अक–विज्ञान एव तात्रिक प्रतीक चिन्हो का अकन भूमि शुद्धिकरण के बाद किया जाता है। इसमे प्राय सूखे रगो का प्रयोग होता है। इन आकृतियो को सामान्य कलाकारो द्वारा बनाया जाना वर्जित है। अनुष्ठान के बाद इनका विधिवत विसर्जन किया जाता है। इन आकृतियो के दर्शन भी सबके लिए वर्जित है।

भित्ति–चित्रण (कोहबर)

भित्ति चित्रण मे मुख्य रूप से कोहबर आता है। इसके अतिरिक्त भी यहाँ अनेक प्रकार के चित्र दीवार पर बनाने की परम्परा है। कोहबर चित्रण को यहाँ कोहबर लेखन कहा जाता है। ये आकृतियॉ इतनी स्पष्ट और सरल होती है कि उनको आसानी से पढा जा सकता है। बिहार के अन्य क्षेत्रो मे भी विवाह के समय कोहबर बनाने की प्रथा है परन्तु जिस विधि–विधान और मनोयोग के साथ यहाँ कोहबर– अकन होता है अन्यत्र प्रतीत नही होता।

कोहबर वह स्थान हे जहाँ विवाह के समय नव दम्पति मिलते है। इसके तीन भाग हाते हे। पहला–गासाइ घर (जहाँ कुल दवता स्थापित होत हे) दूसरा–कोहबर घर (जहा नव दम्पत्ति प्रथम बार मिलते है) तीसरा–कोहबर घर कोनिया (यह कोहबर का बाहरी भाग) होता है। इन तीना स्थानो मे अलग–अलग प्रकार के चित्राकन का विधान हे। काहबर मे प्रयोग होने वाली आकतियाँ सार्थक होती हे और सभी का उददेश्य नव दम्पति क भावी जीवन की मग्ल कामना के साथ वशवृद्धि की कामना होती हे।

कोहबर चित्रण भित्ति पर अयताकार या चतुर्भुजीय आकार का होता है। इनम प्रयोग होने वाली आकति तोता बॉस कमल का पत्ता कछुआ मछली के अलावा मेना–योगिन के चित्राकन का प्रचलन हे। इसमे सामा–चकेवा (मिथिलाचल मे प्रचलित लोक्कथा) का चित्रण भी हाता है। काहबर चित्रण मे तात्रिक आकतिया का भी सामजस्य होता है। कही–कही पर युगल मिथुन आकतियो के साथ कामरत चित्र भी होता है। कोहबर चित्रण अनुभवी महिला चित्रकार ही करती ह। जल रगो से रुइ की तूलिका ओर अनार की कलम से ये चित्र बनाए जाते है। काहबर मे प्रयोग होने वाले रग प्राय चटख होते हैं।

मिथिला की भित्ति चित्रण परम्परा मे सामा–चकेवा की कथा को भी रूपायित किया जाता है। शेव शाक्त ओर वैष्णव सम्प्रदायो के चित्रो की शृखला मे नारी नृत्य विषहरा और अघोरी लोरिकायन दयाल सिह कमला कायला नायका बनजारा तथा राजा सल्हेस आदि। पोराणिक विषया म चीर हरण राधाकृष्ण नृत्य राम–सीता विवाह आदि। जट–जटिन शिशुनृत्य करिया झूमर तथा बगुला–बगुली आदि।

मिथिलाचल म प्रचलित राजा सल्हेस की शोयगाथा हाथी पर सवार अगरखा पहने पगडी बॉध पीठ पर तरकस लगाए हाथ म तलवार लिए हुए चित्रित की जाती हे। ये आकतियाँ वीर रस से पूर्ण हाती ह।

भारत क अन्य क्षेत्रो–उत्तर–प्रदश हिमाचल प्रदेश मध्य प्रदश गुजरात महाराष्ट्र (बारली) उडीसा आदि राज्या म भित्ति चित्रण की परम्परा अति प्राचीन ह। अनक राज्यो म तो मात्र एक ही रग से तथा रेखाआ के माध्यम से ही यह भित्ति–चित्रण होता रहा है। मिथिलाचल क्षत्र की भित्ति चित्र परम्परा अति प्राचीन हे। यहाँ रखाओ के साथ रगा का भी भरपूर प्रयोग होता ह। रेखाएँ सरल और सहज होती हे। चित्रो मे प्रयोग होन वाली आकृतियाँ भी परम्परागत हे। बदलते परिवेश मे चित्रो के विषया म कही–कही थोडी आधुनिकता आ गई हे। समयाभाव और रुचि के अनुसार यह माध्यम अब कम प्रयोग मे आता हे।

पट चित्रण

भारत मे पटचित्रो की परम्परा अति प्राचीन है। पाल काल मे

मुरलीधर कृष्ण – जितवापुर (मिथिला) शैली

कथाओ अथवा महाकाव्यो को चित्रित करने की परम्परा प्रारम्भ हो गई थी। ये कुण्डलित (स्क्रोल) रूप मे होते थे। गुप्तकाल की चित्रकला अथवा अजता के कथा चित्रो मे जीवन कथा या काव्य चित्रण की परम्परा थी । धीर–धीरे लोक सस्कति पर भी इसका प्रभाव पडा और यह राजस्थान मे बापू की फड बगाल मे काली घाट के पटचित्र मनसा कथा' आदि का प्रचलन हो गया । उसी प्रकार बिहार के मिथिलाचल मे पटचित्र परम्परा प्रारम्भ हो गई। मिथिला के पडोसी देश नेपाल मे भी पट–चित्रो की परम्परा है। सम्भवत यही से प्रभावित होकर मिथिलाचल मे भी पट चित्रो और कुण्डलित चित्रो (स्क्रोल) की परम्परा प्रारम्भ हुई होगी।

कला मर्मज्ञो के अनुसार महाराज शिव सिह के काल मे पटचित्रो के प्रदर्शन की परम्परा का प्रारम्भ मिथिला मे हुआ था। पटचित्रो मे अलग–अलग विषय पर आधारित चित्र रचना होती है जबकि कुडलित चित्रो मे सम्पूर्ण रूपायित होती है। जिसके साथ कथा गायन करके भी प्रदर्शित किया जाता था। यहॉ के कुडलित चित्रो मे राय रणपाल की वीरता का चित्र तथा लवकुश कथा' 'राजा सत्येन्द्र की कथा' तथा 'नयना बजारा लोक कथा' गायन के साथ प्रस्तुत करते थे। इन कुडलित चित्रो की लम्बाई लगभग बीस फुट होती है। छोटे आकार के भी चित्र कही–कही उपलब्ध हैं।

भारत मे कम्पनी कला का प्रभाव इन चित्रो पर भी पडा। समय के अनुसार धीर–धीरे पटचित्र और कुण्डलित चित्रो की यह परम्परा कम होती गई और इस शताब्दी के पॉचवे दशक तक आते–आते यह प्राय कम हो गई। कागज पर चित्राकन पद्धति ने तथा चित्रो मे छापा पद्धति के प्रवेश से इस पर प्रतिकूल असर पडा। चित्रो मे व्यावसायिकता आने लगी । समाज की दृष्टि भी बदल्ने लगी ।

मिथिला और तान्त्रिक चित्रकला

यहॉ की तत्र साधना शैव शाक्त और वैष्णव पद्धति पर आधारित है। मिथिलाचल मे बौद्ध तत्रागमो के प्रभाव से दूर रहने का प्रयास किया गया है। इन तान्त्रिक पद्धतियो का रूपाकन अन्य चित्रो से अलग है। महिला चित्रकारो की कलाकृतियॉ और पुरुष कलाकारो द्वारा बनाए गए ये तान्त्रिक चित्र सर्वथा अलग है। विशुद्ध तान्त्रिक चित्रो का सृजन कुछ सिद्धहस्त चित्रकारो द्वारा ही होता है।

मिथिला के तान्त्रिक चित्रो मे अकगणितीय आकृतियो ओर ज्यामितीय आकतियो का प्रयोग होता है। तत्रसाधक चितेरे अपनी आध्यात्मिक चेतना और अनुभव के आधार पर चित्र सयोजित करते हे । गुरू–शिष्य परम्परा के अनुसार यह कला आगे बढती गई। इसमे शक्ति की चार महादेवियो के रूप मे चित्रित किया गया है। महालक्ष्मी महासरस्वती महाकाली और चामुण्डा । देवियो के रूपो मे दस महाविद्या–काली कमला तारा छिन्नमस्ता मातगी षोडसी भैरवी भुवनेश्वरी धूमावती बगुलामुखी इन सबको चित्रकार धैर्यपूर्वक पूरे मनोयोग के साथ चित्रित करते हैं। इन चित्रो के रगविधान भी अलग है।

तीन मालिनें मिथिला शैली

नृत्य कलाकार – जगदबा देवी

मिथिला के तात्रिक चित्र विवेचनात्मक है। विषयानुगत रेखाओ और रगो का प्रयोग इन चित्रो की विशेषता है। इस प्रकार के चित्र प्राय गुप्त रखे जाते है और चित्रकार आत्म प्रचार से दूर रहते है। यह तत्र साधना की क्रिया का एक अग है।

मिथिला लोक कला के गुण

यहॉ के चित्र मुख्य रूप से रेखा प्रधान और दूसरे रग प्रधान होते हे । चित्रो के बाहर मछली फूल फल चिडियॉ आदि का बॉर्डर बनाया जाता है। चित्रो मे आकतियो का जाल–सा बिछा रहता है। कही भी खाली स्थान नही छोडा जाता है। प्रारम्भ मे चित्रो मे प्रयोग होने वाले रग फूल फल छाल के रसो से बनाए जाते थे। काले रग के लिए तेल के दीपक से बनी फलिया मे गोद मिलाकर बनाया जाता था। तूलिका के लिए अनार की कलम या सीक के अग्रभाग से रेखा बनायी जाती थी । कुछ रग खनिज पदार्थों से लिए जाते थे। जैसे पेवरी रामरस सिदूर नील आदि। इनमे बबूल का गोद मिलाकर रग तैयार होते थे। परन्तु आज अधिकतर कलाकार कैमिकल रग जो बाजार मे उपलब्ध हैं उन्ही का प्रयोग करते है।

मिथिलाचल मे हरिजन लोककला की कुछ अलग परम्परा है। स्त्रियॉ अपने घर के बाहर की दीवारो पर मिट्टी गोबर से उभरी हुई आकृतियो से सयोजन बनाती है इन मिटटी के चित्रो मे फल फूल चिडियॉ और जानवरो की आकतियो को बनाया जाता है। स्त्री–पुरूष की आकृतियॉ मिथिला चित्रा की आकृतियो से अलग होती है। हरिजन लोक शैली मे राजा सल्हेस की गाथा कम रगो से बनाई जाती है। गोबर से निकाले गए रस और काले रग का प्रयोग अधिक होता है। यहॉ राजा सल्हेस की मृणमय मूर्ति बनाकर पेडो के नीचे स्थापित भी की जाती है।

पशु अलकरण

म्थिलाचल मे चित्राकन मृणमय मूर्तियो के अलावा पशु अलकरण की भी प्रथा है। गोधन पूजा के दिन गायो पर रगो से आकल्पन किया जाता है। रग–बिरगे कपडो को सीगो पर बॉध कर गायो के गले मे रग–बिरगे मोतियो की माला पहनाकर सजाया जाता है। दीपावली के बाद सुकराती पर्व के दिन इसी प्रकार बैलो को भी सजाया जाता है। हरिजन लोग सुअर को सजाते हैं और एक खुले मैदान मे सुसज्जित बेल और सुअर की लडाई आयोजित कर हर्ष मनाते हैं।

मिथिला चित्र शैली की चितेरी कायस्थ ब्राह्मण और हरिजन समुदाय की महिलाए होती थी परन्तु अब अर्थोपार्जन के लिए पुरुष भी चित्राकन करने लगे हैं। सर्वप्रथम सन 1970 मे जितवारपुर की जगदबा देवी को राष्ट्रीय हस्त शिल्प पुरस्कार मिला। सन 1975 मे

सीता देवी सन 1976 मे रसीदपुर की गगा देवी तथा 1980 मे रॉटी ग्राम की गादावरी दत्ता को तथा 1982 मे महासुन्दरी देवी और लहिरिया गज की शान्ति दवी शिवन पासवान को सन 1986 मे हस्त शिल्प पुरस्कार मिला। भारत सरकार ने मिथिला चित्रकला की सेवा के लिए सन 1975 मे जगदम्बा देवी तथा 1981 मे सीता देवी ओर सन 1984 मे गगादेवी को पदमश्री की उपाधि से अलकृत किया। समय–समय पर अन्य सस्थाओ ने भी यहाँ के अनेक कलाकारो को भी सम्मानित किया हे। यहाँ के कलाकार विदेशो मे आयोजित होने वाले भारत–उत्सवों मे भी भाग लेते रहे हे। अमरिका ब्रिटेन फ्रास जापान इटली जमनी सोवियत सघ के सास्कृतिक आदान–प्रदान कायक्रमो म यहाँ के कलाकारो को भेजा जाता रहा है। विदेशो मे मिथिला शैली के चित्रो को भरपूर प्रशसा मिली है।

उपरोक्त प्रतिष्ठित महिला कलाकारो के अलावा यहाँ जितवारपुर की अनमना देवी बौआ देवी चन्द्रकला देवी त्रिपुरा देवी बच्चू देवी हीरा देवी और रॉठी ग्राम की उर्मिला झा कर्पूरी देवी सावित्री देवी श्यामा देवी शशि देवी प्रेमलता देवी सतधारा सीमरी की जानकी देवी ओर रामप्यारी देवी भवानीपुर की चद्रमा देवी रहिका की पूना देवी एव त्रिवेणी देवी रामपटटी ग्राम की सुनन्दा चौधरी यशोदा देवी आदि महिला मिथिला लोककला चित्राकन मे सलग्न है। हरिजन महिला–चित्रकारो ने अभी भी परम्परागत ढग को अपनाए रखा है। बिहार के मिथिलाचल क्षेत्र की यह कला शैली बिहार का गौरव बनकर रह गई है।

सन 1948 मे भारत की लोक कलाओ और लोक शिल्पो का प्रदर्शन लदन मे पहली बार हुआ। मिथिलाचल की चित्र शैली को देखकर कला मर्मज्ञ आश्चर्यचकित रह गए। इसके बाद यहाँ की कला का विस्तार विश्वस्तर पर छाने लगा। धीरे–धीरे कलाकार स्वात सुखाय रचना करने के बजाय अर्थोपार्जन के लिए रचना करने लगे। यहाँ की कला विश्व के अनेक भागो जैसे अमेरिका ब्रिटेन कनाडा पोलैण्ड जर्मनी जापान भेजी जाने लगी।

सामा चकेवा एक लोक त्यौहार का भित्ति चित्रण

भारतीय हस्त शिल्प बोर्ड के मर्मज्ञ कलाकार भास्कर कुलकर्णी ने इस कला के महत्व को पहचाना और मिथिलाचल मे घूम–घूमकर यहाँ के कलाकारो और कलाकृतियो को देखा। उन्होने हस्तनिर्मित कागज पर यहाँ की महिला कलाकारो से चित्र बनवाना प्रारम्भ कर दिया। धीरे–धीरे जितवारपुर की सीता देवी जगदम्बा देवी ऊषा देवी यमुना देवी और रॉठी की महासुन्दरी देवी की पहचान बनने लगी। सन 1965 मे उपेन्द्र महारथी तथा 1972 मे तत्कालीन विदेश व्यापार मत्री ललितनारायण मिश्र के अलावा कलाविद् पुपुलजयकर आदि ने इस लोककला शैली के प्रचार–प्रसार मे भरपूर योगदान दिया और यहाँ की लोककला शैली देश और विदेश मे लोकप्रिय होने लगी।

भारत की प्रख्यात कला समालोचक श्रीमती कमला देवी चटटोपाध्याय डॉ मुल्कराज आनन्द राजेश्वर नारायण सिह आदि ने मिथिलाचल क्षेत्र की लोक कला का अध्ययन कर यहाँ की कला सम्पदा की भूरि–भूरि प्रशसा की है। सन 1972 मे श्रीमती पुपुलजयकर ने यहाँ की महिला कलाकारो के प्रशिक्षण की भी व्यवस्था की तथा शशिकला देवी को आध्र प्रदेश के चिटटूर स्थित ऋषि वैली स्कूल मे मिथिला–चित्रकला के अध्यापन के लिए नियुक्त किया गया।

सन 1978 से 1981 तक फ्रास के कला मर्मज्ञ विकी ने यहाँ की कला पर द आर्ट ऑफ मिथिला' पुस्तक लिखी जिसका प्रकाशन लदन से हुआ। इसके अलावा जर्मनी कनाडा फ्रान्स के अनेक कला मर्मज्ञो ने यहाँ की लोक कला को देश से बाहर प्रतिष्ठित करने मे अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। आज भी व्यावसायिक दृष्टिकोण से अनेक कला दीर्घाओ मे यहाँ के चित्र देखे जा सकते है। मिथिला के समाज मे आज भी सस्कारो मागलिक पर्वो और उत्सवो मे यहाँ की लोक चित्र शैली अपना स्थान बनाए हुए है।

चित्र साभार – मिथिला की लोक चित्रकला सफलताएँ–असफलताएँ लेखक – अवधेश अमन ललित कला अकादमी नई दिल्ली 1992

शिव ताडव जल रग (वाश) 28 x 38 सेमी नित्यानन्द महापात्र

भारतीय कला, संस्कृति एवं शिक्षा

*डॉ गोपाल मधुकर चतुर्वेदी **

भारतीय कला मे भारतभूमि के विचार धर्म तत्वज्ञान ओर सस्कति के दर्शन किये जा सकते हे। भारतीय जन–जीवन को रेखाओ वर्णो शब्दो तथा अनेक अन्य माध्यमो के द्वारा कलात्मकता प्रदान की गयी है। भारतीय रहन–सहन बोल–चाल चिन्तन भाव तथा पूजा–विधि को भारतीय कला मे सजो दिया गया है। भारतीय कला को दीर्घकालीन रूपसत्र कहना उचित हे जिसने देश के प्रत्येक भूभाग मे अपना अर्ध्य अर्पित किया है। इस रूप समृद्धि मे अनेक जातियो ने भाग लिया है। किन्तु इसकी मूल प्रेरणा और अर्थ– व्यजना मुख्यत भारतीय ही है। [1] इस भारतीय सस्कृति का प्रचार व प्रसार इस भूभाग से परे पर्वतो के उस पार तथा समुद्रपार तक हुआ और निश्चित ही जो रूप और अर्थ भारतीय कला का इस भूभाग पर व्यजित हुआ वही उन देशो मे भी आरूपित हुआ। आज भी ऐसी सामग्री सुरक्षित है तथा भारतीय कला व सस्कृति की यशो गाथा का जीवत प्रमाण है। हिन्देशिया से लेकर मध्यएशिया तक का सारा भूभाग भारतीय कला एव सस्कृति के प्रभाव मे समाया हुआ था। आज हमे आश्चर्य होता है कि इस प्रकार कैसे सम्भव हुआ होगा। कितना गम्भीर व सशक्त आन्दोलन रहा होगा? इसके अध्ययन के लिये भारतीय धर्म दर्शन और सस्कति को भी साथ मे लेना होगा जिसके लिये वेद काव्य त्रिपिटक और आगम आदि विविध साहित्य का मनन आवश्यक है जिसकी ओर से हमने आज ऑखे मूँद ली है।

भारतीय कला की अपनी एक अनूठी विशेषता रही है। उसमे रूपायित सास्कृतिक जीवन एक इतिहास बन गया है। इसमे राजा और प्रजा दोनो के जीवन का चित्रण हुआ है। कलाकार मुक्त हृदय होकर तूलिका–सचालन करता रहा उसने भारतीय जन जीवन को जितनी सबल अभिव्यक्ति दी है उतना ही साहित्यिक–वर्णनो की भी व्याख्या आरेखित कर दी है। यदि कोई भारतीय जीवन और रहन –सहन का इतिहास लिपिबद्ध करना चाहे तो इस प्रचुर सामग्री से ही लाभान्वित हो सकता है। भारतीय वेशभूषा केश विन्यास आभूषण एव शयनासन आदि की सामग्री चित्र शिल्प आदि मे मिलती है। उनमे तो सामान्य जनता को भी स्थान मिला है। भरहुत साची अमरावती नागार्जुनी–कोडा आदि के महान स्तूपो पर मानो जनता के जीवन की सतसाहस्त्र सहिता ही लिखी हुयी है।[2] भारतीय कला सदा जीवन को साथ लेकर चली है। अतएव उसमे समसामयिक जन–जीवन का प्रतिविम्ब पाया जाता है।

हमारे सस्कारो मे राज्य राजनीति और हार जीत को उतना महत्व नही दिया गया जितना कि अध्यात्म धर्म कल्पना और कला को। ससार की अनेकानेक जातियो मे भारतीयो पर कभी भी राजनीतिक घटनाओ –शासन बलात युद्ध का अनुशासन नही रहा। हॉ धार्मिक आन्दोलन तथा अध्यात्म से 'सामान्य कल्पनाओ मानदण्डो और सामाजिक परम्पराआ की पाडित्यपूर्ण स्थापनाओ से भारतीय सस्कृति एव कला अवश्य अनुशासित रही है। मध्यपूर्व और दक्षिण एशिया इन्ही के द्वारा अनेक शताब्दियो तक एक आत्मिक समाज के रूप मे सगठित रहा है।[3]

भारतीय सस्कृति को समन्वयात्मक सस्कृति की सज्ञा दी जाती हे दी जाती रही है। मै इसक पक्ष –विपक्ष मे कुछ नही कहना चाहता किन्तु यह अवश्य कहना चाहूँग। 'कि भारतीय कला और सस्कति उदार अवश्य रही है उसमे लचीलापन इतना रहा है कि देश तथा देश से बाहर विदेशी व पिछडी नस्लो और विभिन्न जातियो – प्रजाातिया को आत्मसात करती रही है। उसका कारण समन्वयवादी दृष्टिकोण तो नही ही रहा है और बहुत ही स्पष्ट है कि धर्म शास्त्रीय मतो और रूढिया पर आश्रय भी कारण नही रहा। बल्कि विशुद्ध बौद्धिक और आध्यात्मिक परम्पराओ पर रहा है और इन्ही के कारणवश भारतीय सस्कारो को सामाजिक मूल्यो मे सस्थाओ की व्यवस्था मे विकास के लिये बल मिलता रहा है। 'निम्न स्तर की और विदेशी असख्य नस्लो के लिये अपना द्वार खोलने के लिए भारत ने जिस प्रकार विस्तृत रूप मे वर्णशकर की कल्पना रखी उस प्रकार कोई जाति नही रख सकती थी। उपनिषदो ने दया सयम और दान के गुणो पर और बुद्ध ने सयम के अष्टागिक मार्ग पर बल दिया और तबसे धर्म के भारतीय विधान मे विनम्रता करूणा और अहिसा पर ही जोर रहा है। भारत ने इन गुणो द्वारा बहुत सी जातियो को बिना तलवार और बन्दूक के विनम्र और सभ्य बना दिया।[4]

भारतीय कला और सस्कृति के इन्ही गुणो को रेखाओ वर्णो प्रस्तरीय फलको स्वरो और शब्द प्रतीको के द्वारा अभिव्यक्ति मिलती रही है। सस्कृति के भारतीय दर्शन की सर्वाधिक तर्कसगत सशक्त और पुनीत अभिव्यक्ति एलिफेन्टा की गुहा (आठवी शती ई0) की शिव महेश्वर की विख्यात मूर्ति (त्रिमूर्ति) मे हुई है। मध्य का मुख आत्मतल्लीन निरपेक्ष और पारलौकिक 'तत्पुरूप सदाशिव का है। दाहिना मुख अघोर भैरव' का है– जिसमे मुख की उग्रता तनी

* ए/124 'गीतालिनिलयम' नव आवास विकास कॉलोनी पक्ष ॥ काशीपुर उधमसिह नगर (उ प्र) पिन 244713

भृकुटिया तथा वेराग्य और विनाश की भावना मुखर हो उठी बाया मुख भुवन मोहिनी परमसौन्दर्यमयी चपल सृजन शीलता और करुणा के बल पर लासमयी आभूषण– युक्त शिव की सगि उमा का है । भारतीय सस्कृति मे उमा (शक्ति) कमल धारण क वाली अर्थ काम अर्थात सम्पत्ति सौन्दर्य और जीवन सुख मातृ–सत्ता है। सर्पों से घिरे अघोर भैरव धर्म ओर मोक्ष के प्रतीक यहाँ त्रिमूर्ति भारतीय सस्कारो की जागृत अभिव्यक्ति है। त्रिमूर्ति का विशाल मुकुट परमात्मन शिव के तीनो सिरा मे अन्य सन्तुलन और एक्य उत्पन्न करता है।

प्रकृति काष्ठ छापा 23 x 36 श्याम शर्मा

भारतीय कला भी भारत के दर्शन और धर्म की तरह कल प्रधान और आध्यात्मिक रही है जाति परक और सामाजिक रही इस कला के मानक प्रागैतिहासिक काल से अद्यतन कि परम्परागत– सूत्र मे पिरोये हुये दिखायी पडते है। सामान्य जन लेकर प्रतिष्ठित जन तक प्रजा से राजा तक का सहयोग इस क सस्कृति के निर्माण मे रहा है। हमारे सम्मुख एक जटिल प्रश्न है प्राचीन काल मे शिक्षा प्रदान करने के क्या विधि विधान थे? ‹ मानदण्ड थे? क्या प्रकिया थी जिससे कला व सस्कारो को धर्म व्यवहारो को जनसामान्य के मानस तक पैठने की सहजता थी। आज नगर–नगर मे अनेक शिक्षा सस्थाओ के होते हुये भी सम नही है।

क्या कालगति ऐतिहासिक उथल –पुथल अन्य देशीय सास्कृति प्रभावो के फलस्वरूप हमने अपने को अपग बना लिया है। ह अपनी मानसिकता को पगु बनाकर बैसाखियो के सहारे चलने अभ्यस्त बना लिया है?

सम्भवत भारतीय शिक्षा –पद्धति नितान्त मौलिक स्व–सस्क से विनिर्मित अपनी विशिष्टताओ मे पगी हुयी थी। यही कारण कि भारतीय जन उससे परिचित था अत उसे सहजभाव से ग्र कर लेता था । आज जो पद्धति है वह विजातीय तत्वो की भ हमारे सस्कारो को दूषित ही कर रही है।

ग्राम बाला जल रग (वाश) 58 x 39 सेमी 1988 बद्रीनाथ आर्य

शिक्षा' का अर्थ कोई विषय या पुस्तक का पढना या अवलोव करना नही है यह व्यापक अर्थ धारण करने वाला शब्द है। इ विचारो और व्यवहारो को प्राञ्जल करने की सामर्थ्य है। इ मानवजातियो और राष्ट्रो को सुसस्कृत बनाने की क्षमता है। विच को सुसस्कत और विकासशील बनाना साधारण कार्य नही है वह सम्पूर्ण जाति के विचारो को। प्राचीन काल मे ऋषियो मे कु यायावरी प्रकृति के थे जो घूमते रहते थे और ज्ञान का प्रच घर–घर व्यक्ति– व्यक्ति तक करते थे। यह उस युग की शिक्षा ‹ ही एक रूप था। इसी प्रक्रिया का अवशेष आज भी हमे प्राप्त जाता है। कुछ विश्वविद्यालय उन प्रतिष्ठित विद्वानो जो कि सस्थान से सम्बद्ध नही है वे भी यायावरी – सम्प्रदाय के ही हो हैं उन्हे विशिष्ट विषय पर बोलने को सादर बुलावा देते है। – आते है और अपने ज्ञान का फल शिक्षार्थियो या श्रद्धालुओ को देक चले जाते है। पहले का यायावरी ऋषि अपनी प्रेरणावश ऐसा करत था इसीलिये वे प्रणम्य है।

जातियो और राष्ट्रो को सस्कारित करने का यह कार्य कब तक चलता रहा – कौन कह सकता है? शिक्षा का मूलार्थ सम्पूर्ण जीवन को सही रूप मे विकसित करने मे ऐसी दृष्टि शक्ति प्रदान करना था जो आर पार देखने की क्षमता रखती है। कहा भी है समस्त तत्वार्थ विलोकि दक्षम? शिक्षा के महत्व को ऋषियो ने जाना और उन्होने प्रयास किया। प्रत्येक व्यक्ति से सम्पर्क जोडने के लिये यन्त्रो मे एकत्रित समूहो का उपयोग किया। क्योकि यहॉ ऋषि और जन–सामान्य दोनो ही एकत्र होते थे। उस युग मे शिक्षा की कोई पद्धति प्रकाश मे आई हो ऐसा कोई प्रमाण नही प्राप्त है। बस एक व्यक्ति किसी महत्वपूर्ण– ज्ञानोपलब्धि को उदार बुद्धि से दूसरे के कल्याण की सदेच्छा से उसे बतलाता है। बस इसी रूप मे शिक्षा का श्री गणेश हुआ।

आने वाली पीढी को शिक्षित किया जाए विधिवत ऐसा सोचने पर पद्धति का प्रश्न उठा। क्या और कैसे ये दो गहन प्रश्न थे ? किन्तु इनका हल ढूँढ लिया गया है। तभी बच्चो को शिक्षा दी जाने लगी और बडो को उपदेश। यहॉ ध्यातव्य है– शिक्षा और उपदेश का लक्ष्य समान ही था– जीवन के स्तर को ऊपर उठाना उसे सस्कारित करना।

जो शिक्षा पूर्णत शक्ति रूप मे अभ्युदय श्रेय ओर सिद्धि प्रदान नही करती वह शिक्षा बॉझ होती है। उसमे उत्पादन करने की शक्ति का अत्यन्ताभाव होता है।[5] मात्र रोजी–रोटी प्रदान करने वाली शिक्षा को शिक्षा नही कहा जा सकता। शरीर मन बुद्धि ओर आत्मा की राशिपुज मानव है और शिक्षा अन्तर्ज्योति का साधन पेट पालने का हथकण्डा नही। वैदिक युग के ऋषि यह जानकर चलते थे कि मानव के विकास की सीमा प्रकृति से ही निर्धारित नही होती शिक्षा से भी निर्धारित होती है। शिक्षा बहुत बडी शक्ति है ब्रह्मास्त्र है जिसे सोच–विचार कर ही किसी को सौंपा जा सकता है।

शिष्य के लिये तीन शर्तें निर्धारित की गई– पवित्र (भीतर से और बाहर से) सयतेन्द्रिय और ब्रह्मचारी। आचार्य और विद्यार्थी दोनो अब्राह्मण भी होते थे – परन्तु उनके लिये शीलवान होना उच्चचरित्र का होना आवश्यक था। सदाचार और शील का अत्यन्त विचार किया जाता था। शील नष्ट होना शरीर नष्ट होने से भी भयानक दुर्घटना मानी जाती है और वह आचार्य तथा विद्यार्थी दोनो के लिये ही।

विद्यार्थी आचार्य की सेवा मे मात्र विद्या ही नही प्राप्त करते थे–विद्या का सही–सही उपयोग करने की रीति और शक्ति भी प्राप्त करते थे। जीवन को पूर्णता प्रदान करने मे पढी हुयी या सीखी हुयी विद्या का क्या योग हो सकता है यह एक गम्भीर प्रश्न है? जीवन प्रधान है – सब कुछ जीवन के लिये है। उन्नतिशील जीवन की ठोस योजना हमारे पास होनी चाहिये। शिक्षा साध्य नही है – वह पूर्णता प्राप्त कराने का समर्थ साधन है। जीवन का लक्ष्य ही है पूर्णता प्राप्त करना। विद्यार्थी जीवन इसी की तैयारी है।

वैदिक युग के आचार्य बोलकर ही पढते थे और सुनकर विद्यार्थी याद करते थे। लिखने–लिखाने का चलन तब था ही नही।

रेखाकन – वीरेन्द्र सिह राही

सयोजन 27x38 सेमी जल रग (वाश) 1940 – हरिहर लाल मेढ

स्पष्ट आदेश है– राजस्नातकयोश्चैव स्नातको नृपमानभार।

भारतीय भूमि पर कला सस्कति और शिक्षा के प्रतिष्ठापित मानो की एक झलक हमने पा ली है। आज के युग मे जब कि युवा पीढी को न अपनी कला और न अपनी सस्कति और न ही शिक्षा के मानको का ज्ञान है–वह मॉड–फेशनिक–कुसस्कारो मे लिप्त दिशा–भ्रम के प्रति भी सचेत नही। अत आवश्यक हो गया है कि आज की शिक्षा पर समूल सशोधन किया जाए और जिस इतिहास धर्म सस्कति कला आदि के प्रति भटकाव उत्पन्न कर दिया गया है वे ही मुख्य विषय रहे। आश्चर्य तब होता है कि स्वतन्त्रता के 53 वर्षों के लम्बे अन्तराल मे हमने अपनी दासवृत्ति से छुटकारा नही पाया है। आज भी हम अपनी भाषाए ऑग्ल माध्यम से पढते है। सस्कृत भाषा को मूल ग्रन्थो से नही टीका और टिप्पणियो से शिक्षा दी जाती है। कला के माध्यम भारतीय नही विदेशी है। सस्कारो का भारतीय मूल अनेक भ्रष्ट आवरणो से ग्रस्त है।

इस ओर ध्यान दिया जाना चाहिए अन्यथा स्वतत्र भारत की युवा – पीढी का भविष्य क्या होगा। कल्पना नही की जा सकती।

आज भारतीय कला रूपो मे छिपे सूक्ष्म अर्थों का परिचय पाने तथा पुरातन–सस्कारो को कुरेदने की फिर आवश्यकता हो गई है। शिक्षा का वही रूप ग्रहण करने की लालसा जागृत करनी होगी तभी भटकाव से मुक्ति मिल सकेगी। मानसिक–दासता से छुटकारा मिलेगा। तब– जैसे अग्नि घर मे प्रवेश करके घर को दग्ध कर देती है वैसे ही कला के आधार से चित्त मे जो भाव अनुप्राणित या प्रेरित होते है उनसे मन का मैल हट जाता है। ठीक इसी भाति भारतीय कला सस्कृति और शिक्षा के सूत्र सम्भव है युग परिवर्तन करने मे अपनी सामर्थ्य दिखा दे।

❑

त्रिमूर्ति (आरम्भिक 7वी शती) एलीफैन्टा महाराष्ट्र

हम कल्पना करे कि आचार्य विषय और विद्यार्थी इन तीनो का पूर्ण योग ही शिक्षा की पूर्णता है। बोलन वाला वह क्या कह रहा है– विषय और सुनने वाला –तीनो मिलकर जब तक एक नही बन जाते एक ही केद्र बिन्दु मे लय नही हो जाते तब तक वह क्रिया इच्छित परिणाम मे अपने को बदल ही नही सकती। तीनो के योग से ही चौथी शक्ति का विस्फोट होगा। आचार्य और विद्यार्थी एक दूसरे मे प्रवेश कर जाते है– आचार्य विद्यार्थी की चेतना मे प्रवेश करता है ओर विद्यार्थी आचार्य के ज्ञान मे। यह परकाया प्रवेश' का ही योग है। समाधि तो अपने भीतर ही होती है किन्तु जब आचार्य प्रवचन आरम्भ करता हे तब स्थिति दूसरी ही रहती हे।

शिक्षा का प्रबन्ध कई प्रकार का था –आश्रम मे गाव मे और घर मे।[6] ऐसा भी पता चलता है कि अपने–अपने विषय के सिद्ध विद्वान अपने ही घर मे विद्यार्थियो को रखकर भी पढाते थे। प्रसिद्ध तक्षशिला का विश्वविद्यालय इसी प्रकार का था। उस समय शासन शक्ति से ज्ञान शक्ति को अधिक आदर मिला हुआ था। मनु का

1 *वासुदेवशरण अग्रवाल भारतीय कला पृ01*
2 *वासुदेवशरण अग्रवाल भारतीय कला पृ06*
3 *राधा कमल मुकर्जी भारत की सस्कति और कला पृ0 13*
4 *राधाकमल मुकर्जी भारत की सस्कति और कला पृ0 14*
5 *प0 मोहन लाल महतो आर्य जीवन दर्शन पृ0 363*
6 *ऋग्वेद 9/113/6*
7 *मनु 2/151*

चित्र साभार – व्यक्तिगत सग्रह – श्री नित्यानन्द महापात्र (लखनऊ) प्रो० श्याम शर्मा (पटना) प्रो० बद्रीनाथ आर्य (लखनऊ) श्री विरेन्द्र सिह राही (नई दिल्ली) स्थायी सग्रह – राज्य ललित कला अकादमी उ0प्र (एक्स न 67 100-1) इण्डियन आर्ट – राय सी क्रैवेन प्रेजर पब्लिशर्स न्यूयार्क।

रात्रि मे दु साहसिक कार्य बूदी शैली 1780 चण्डीगढ म्यूजियम चण्डीगढ
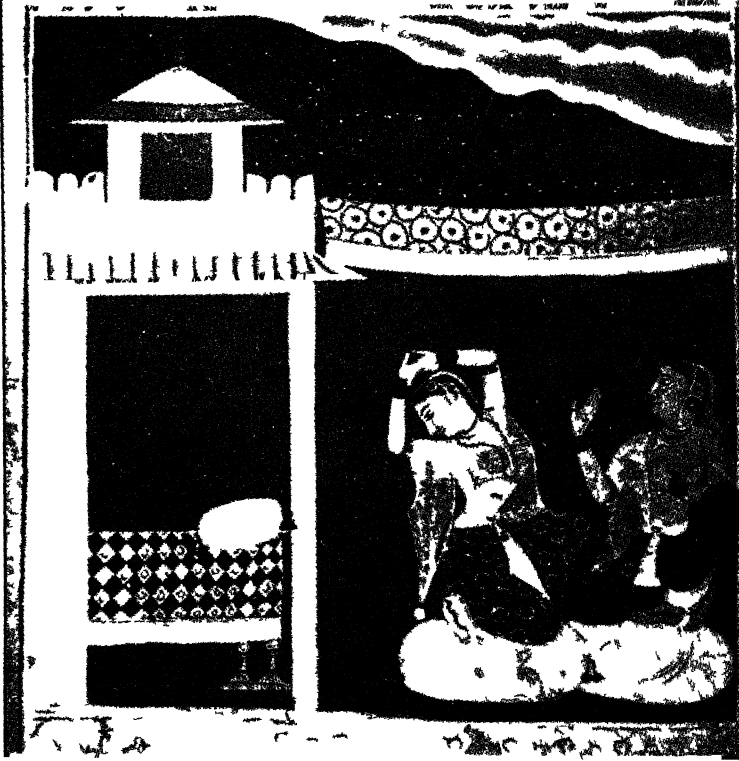
रागिनी वरारी 6 75 x 7 5 मेवाड शैली 1600 सग्रह – गोपी कृष्ण कनौरिया कलकत्ता

चाकदारजामा लम्बा पटका पहने है जो कि बाये की अपेक्षा दायी और अधिक जाता हुआ है। ये मेवाड की स्वय की परम्परा थी। नायिका छोटी नीली चोली लम्बी धोती और काली लटकन पहने सो रही है उसकी ओढनी सिर के पीछे पडी है।

यह सम्भवत अपभ्रश शैली के चित्रो की परम्परा को लिये है। रगो मे नीला पीला हरा तथा लाल (प्रलाक्षा) आदि का प्रयोग प्रारम्भिक परम्परा का स्मरण कराते है।

दूसरा महत्वपूर्ण चावण्ड रागमाला चित्र सम्पुट 1605 ई का माना गया है यह तिथि सदिग्ध है। इस समय शहजादा परवेज ने मेवाड पर आक्रमण किया था और राणा अमर सिह ने अपनी राजधानी उदयपुर से हटा कर पुन चावड कर दी थी। इसलिये सभी चित्रकार चावड चले आये और मेवाड की वित्रकला यथावत चलती रही। इस रागमाला चित्र सम्पुट के 42 चित्रो मे से केवल 26 ही उपलब्ध है जो कई सग्रहो मे सुरक्षित है –

1 श्री गोपी कृष्ण कनौरिया के सग्रह मे–गौरी तोडी दीपक गुणकली विभास तथा मारू पर आधारित चित्र हैं।

2 वेदपाल बन्नू सग्रह जयपुर मे– हिडोल राग

4 भारत कला भवन बनारस मे – मालकोस राग ञ

5 काउटी सग्रहालय लास एजिल्स मे – मालश्री

6 एडविन विनी थर्ड के सग्रह मे – खम्भावती

7 जेपी गोयनका बम्बई – बगाल रागिनी

तथा शेष 13 निजी सग्रहो मे है।

1605 के इन चावण्ड रागमाला चित्रो की 1600 के रागमाला चित्रो से समानता दिखाई देती है जैसे बादलो को प्रस्तुत करने के नियम मे लहरदार पटटी के दोनो ओर सफेद एव काले रग से आकाश को स्थापित किया है। इन चित्रो का वास्तु निर्माण सादा है। कक्ष की अदर की दीवारो मे आलो का अभाव है जो मेवाड की 1600 की रागमाला श्रृखला मे प्राप्त था। दोनो चित्र श्रृखलाओ मे लोकशैली के अवशेषो से युक्त अपभ्रश शैली एक नवीन रूप मे विकसित होती हुई दिखलाई देती है।

इस चित्र सम्पुट के मारू रागिनी के चित्र (यह नाम प्रसिद्ध लोक प्रेम गाथा ढोला मारू से लिया गया है) पर निम्नलिखित पुष्पिका (अभिलेख) लिखी हुई है –

श्री कनौरिया जी ने अभिलेख को सम्वत 1662 वर्ष वैशाख सुदी 2 लिखतम निसार दी चन्डा मध्ये पढा अर्थात सम्वत 1662 (सन् 1605 ई) मे वैशाख महीने के मध्य के द्वितीय चरण मे चन्डा (चावड) मे निसार–दो द्वारा चित्रित हुई। इस चित्र सम्पुट के बारे मे अधिक विस्तार से समझने के लिये मारू रागिनी चित्र पर पडे उक्त अभिलेख की तिथि व चित्रकार के सदर्भ मे निम्नलिखित तथ्य की पुनर्समीक्षा आवश्यक है –

1 उक्त अभिलेख का प्रथम शब्द सम्वत इतना अधिक नष्ट हो गया है कि उसको पहचानना कठिन है। 1662 मे अन्तिम अक 2 के अतिरिक्त अन्य सख्या सूचक अक ठीक से पढने मे नही आ रहे है। यह 1632 या 1652 के रूप मे भी पढे जा सकते है।

2 शब्द निसार दी पूरी तरह स्पष्ट नही है अब केवल नि और रदी शब्द ही पूरी तरह दिखायी देता है। नि के बाद का अक्षर कुछ देवनागरी सख्या सूचक 7 (7) के समान है। यह स्पष्ट नही है कि कनौरिया जी ने कैसे इस शब्द को निसार दी तथा तदुपरान्त निसाररुद्दीन बना दिया। यद्यपि इसमे कोई सदेह नही है कि मेवाड मे मुसलमान चित्रकार थे।

इस श्रृखला के चित्र प्रारम्भिक जैन कल्पसूत्र और बाद के मेवाडी चित्रो के मध्य की एक कडी है। दक्खनी कलाकारो से सम्बन्ध होने के कारण मेवाड के चित्रकारो ने उनकी भी कुछ विशेषताए अपना ली थी। इस श्रृखला के चित्रो मे रग तथा पेडो का सयोजन दक्खनी कलम से प्रभावित है।

तथाकथित 1605 की रागमाला (यद्यपि यह तिथि सदिग्ध है) चित्र श्रृखला के चित्रो मे अकित आकृतियॉ व शैली चौर–पचाशिका (1540) चित्रो के अनुरूप है। सभव है अभिलेख का सवत जो कनौरिया जी ने 1662 पढा 1632 (अर्थात् सन 1575) हो। लगभग

इसी समय महाराणा प्रताप ने चावड को अपनी राजधानी बनाया था। इन चित्रो की टकटकी लगाये मोटी आखे नाक तथा लम्बी ठुडडी राजपूतो के आनबान का शौर्य को प्रदर्शित करती हुई है। स्त्रियो का गोल मुख अपभ्रश शैली के समरूप होकर चौर–पचाशिका गीत गोविन्द एव भागवत के चित्रा से अधिक निकटता लिये हुये है। इन चित्रो मे चाकदार जामे लम्बे सकीण पटके तथा विशेष अटपटी पगडी है जो कुछ परिवर्तन क साथ अकबर कालीन मुगल चित्रो मे दिखाइ देती है। पुरुषा के वक्ष पर दिखाये गये अगरखे की झालर राजस्थानी वेशभूषा का पूर्व रूप हे। नारी आभूषणो के साथ–साथ जूतो की नोक पर एक मोटा फुदना भी अकित है। आकृति सयोजन सबल तथा निधारित सीमाओ मे बधा हुआ है। आकृतियो क पीछे की प्रलाक्षा (लाल) पृष्ठ भूमि–मेवाड की विशिष्ट विशेषता को इन चित्रो मे देखा जा सकता है। अत इन चित्रो की तिथि 1605 के स्थान पर 1575 अधिक उपयुक्त प्रतीत होती है।

1610 की चित्रित एक अन्य चित्र शृखला मेवाड की प्राप्त हुई है। जिसका एक चित्र गूजरी रागिनी बडौदा सग्रहालय मे सुरक्षित है तथा एक पृष्ठ मालकोस राग नॉर्मल ओ स्टोन एव गला ए स्टोन मैमोरियल फण्ड मे सुरक्षित है।[3] इस सेट के मालकोस चित्र की तुलना 1605 के चावड वाले सैट के मालकोस से करने पर लगता है मानो दोनो सैट एक ही कलाकार ने अलग–अलग समय पर बनाये हो।

बूँदी शैली

रागमाला चित्रो की परम्परा मे बूँदी की चित्रकला का स्थान कलात्मक दृष्टि से महत्व रखता है। अजमेर के दक्षिण पूर्व मे हाडा राजपूत राज्य की राजधानी बूदी को 1343 मे राव देवा ने स्थापित किया। यहा का महत्वपूर्ण समय राव सुर्जन सिह (1554–1585) का है। इनके समय से इस शैली के चित्र मिलने प्रारम्भ हो जाते हैं। राव सुर्जन सिह ने अपने शासन काल मे मेवाड की आधीनता त्याग कर मुगलो की आधीनता स्वीकार की। अकबर ने इन्हे बनारस का गवर्नर नियुक्त किया इस समय इनके आधीन चुनार' एक परगना था।

बूदी शैली के आरम्भिक राग माला चित्र (चुनार रागमाला) देश–विदेश के सग्रहालयो मे है। बूदी की उक्त रागमाला शृखला के चित्रो के समय व शैली की मौलिकता पर कला मर्मज्ञो एव समीक्षको मे वैचारिक मतभेद रहा है। स्टुअर्ट कैरी वेल्व ने एक रागमाला चित्र के पीछे अकित चित्र पुष्पिका के आधार पर बूदी के आरम्भिक रागमाला (चुनार) चित्रो का समय 1591 ई माना है।[4] यह निर्णय इन्होने रागिनी भैरवी राग दीपक एव रागिनी मालश्री के कुछ निश्चित शैलीगत तत्वो के आधार पर लिया किन्तु कार्ल जे खण्डालावाला की चर्चानुसार राव सुर्जन सिह (1554–1585) के शासनकाल मे चित्रकला का कही कोई उल्लेख नही मिलता है। इन्होने चित्रो की तकनीक रग योजना एव सामान्य गुणो के आधार पर इन्हे जहॉगीर कालीन माना है।[5] उनके अनुसार यदि चित्र के पीछे लिखी पुष्पिका विशुद्ध है और 1591 ई ही इसकी तिथि है तब निश्चित रूप से इस पुष्पिका पर शासक का नाम वर्णित होना चाहिए जो बूँदी पुष्पिकाआ की परम्परा रही हे।

इस रागमाला सम्पुट के चित्रा क शीर्ष भाग मे पीले रग (गऊ गोली) की सतह पर काली स्याही की लिखावट राजस्थानी तथा सस्कृत भाषा की अभिव्यक्ति दती हे किन्तु मायलो बीच ने कलाकृति के पीछे चित्र पुष्पिका को नीली स्याही से फारसी भाषा मे होने सम्बन्धी उल्लेख किया हे। जबकि बूदी के रागमाला चित्रा पर नीली स्याही से प्राय चित्र पुष्पिका देखन का नही मिलती है। दूसरे मायला बीच न एक अन्य सदभ मे 1591 इ म मीर सैयद अली व अब्दुस्समद के शिष्यो द्वारा राव सुजन सिह के शासनकाल मे चुनार रागमाला का चित्रित माना। जो कि बूदी शासक राव भोज (1585–1607) का शासनकाल था। इसलिये यह 1591 का चित्र सम्पुट कैसे हो सकता हे जबकि राव सुर्जन सिह की 1585 ई मे मृत्यु हो गयी थी तथा राद भोज के चुनार मे रहने एव समकालीन चित्र सृजन सम्बन्धी जानकारी इतिहास मे प्राप्त नही होती। अत उक्त विद्वानो के मत सदिग्ध प्रतीत होते है। यह रागमाला चित्र सम्पुट बाद का प्रतीत होता हे।

डा प्रमोद चन्द्र एव खण्डालावाला ने बूदी के आरम्भिक चित्रो की शैली पर मेवाड शैली का प्रभाव माना है। ये कला मर्मज्ञो के

रागिनी गौदी बूदी शैली 1780 अलवर म्यूजियम अलवर

आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुचते है कि बूदी के आरम्भिक चित्रो का समय 1591 ई के स्थान पर रावरतन सिह (1607–1631) के शासनकाल मे प्राय 1610–1625 ई मान लेना उचित है। प्रमोद चन्द्र ने भी इन्हे रावरतन सिह के शासनकाल का प्रमाणित किया है।[9]

अत उक्त विद्वानो के विचार भेद को देखते हुए मेवाड की चावण्ड रागमाला के समान इन चित्रो की पुनर्समीक्षा की आवश्यकता है क्योकि यह कृतिया बूदी की एक महत्वपूर्ण धरोहर है।

बूदी की प्रथम रागमाला शृखला (चुनार) क 36 मे से केवल 12 चित्र ही अब तक प्राप्त हुये है तथा ये चित्र भी देश विदेश के विभिन्न सग्रहालयो मे बिखरे हुए है जो निम्नलिखित है –

ललित रागिनी 65 x 75 मेवाड शैली 1600 सग्रह – गोपी कृष्ण कनौरिया कलकत्ता

1 भारत कला भवन बनारस मे – राग दीपक विलावन पटमजरी एव कामोदिनी।
2 म्यूनिस्पल म्यूजियम इलाहाबाद मे – भैरवी रागिनी।
3 एस सी वेल्व कैम्ब्रिज – गुण्डराज भैरव राग खम्भावती।
4 जेम्स आइबोरी– पचम रागिनी
5 निजी सग्रहो मे – रामकली आसावरी एव केदार

इन चित्रो की शैली तकनीक रगयोजना सयोजन तथा विषय–वस्तु आदि मे आरम्भिक मेवाडी चित्राकन परम्परा का प्रभाव स्पष्ट रूप से आया दिखाई देता है। ज्ञातव्य है कि बूदी शैली के आरम्भिक चित्रो को अनेक विद्वानो ने मेवाड की उपशैली कह कर अभिहित किया है। प्रमोद चन्द्र ने बूदी शैली को मेवाड की एक प्रमुख शाखा के रूप मे माना है।[10] प्रारम्भिक बूदी (चुनार रागमाला शृखला 1610–25) के चित्रो मे पाये गये अधिकतर तत्व मेवाड की रागमाला (चावण्ड) से लिये गये प्रतीत होते है। तीन विभिन्न शैलियो का प्रयोग इन चित्रो मे देखने को मिलता है। 1 इन चित्रो के स्पष्ट लोक कला की तरह के रग व आकृतियो के गोल मुख से मेवाड का स्मरण हो आता है। 2 ध्यानपूर्वक बनाये गये नयन गोचर दृश्य जल मे चक्कर दार भवर बनाने की तकनीक और आकश मे विभिन्न रगो (रागिनी भैरवी के चित्र मे प्रयुक्त आकाश मे सशक्त लाल के पैचज) के सतुलित धब्बे स्थानीय प्रभाव को दर्शाते है। 3 वृक्षो व फूलो की प्रचुरता पक्षी व मछलिया बूदी की प्रकृति से ली गयी होने पर भी अकन के कौशल एव यथार्थवादिता की दृष्टि से माडू एव मुगल शैली का अप्रत्यक्ष प्रभाव है।

निष्कर्ष स्वरूप कह सकते हैं कि बूदी के राग माला चित्रो का यह सम्पुट प्राय चावड रागमाला (1605 ई) के क्रमिक विकास का प्रतिफल है जो विकसित एव पुष्पित होकर (चुनार रागमाला मे) एक स्वतन्त्र शैली (बूदी शैली) के रूप मे प्रस्तुत हुई दिखायी देती है।

सदर्भ –

1 क्रोनोलॉजी ऑफ मेवाड पेन्टिग–श्रीधर आन्द्रे दिल्ली 1987 पृष्ठ 39
2 हीरेन मुखर्जी ललित कला न 12 अक्टूबर 1962
3 लिण्डा मॉर्क लीच–मालकोस प्लेट 89
4 स्टुअर्ट केरी वेल्व–ए फ्लावर फ्राम एवरी मेडो 1973 पृष्ठ 17
5 कार्ल जे खण्डावाला–बूदी पेटिग पोर्ट फोलियो न 7 देहली 1970 पृष्ठ 1
6 वही
7 मायलो क्लीवलैड बीच–राजपूत पेन्टिग एट बूदी एण्ड कोटा–स्विटजरलैड पृष्ठ 9
8 स्टुअर्ट केरी वेल्व एण्ड मायलो क्लीवलैड बीच – गॉडस थ्रोन्ज एण्ड पिकॉक न्यूयार्क 1965 पृष्ठ 117
9 प्रमोद चन्द्र– बूदी पेन्टिग देहली 1959 पृष्ठ 1
10 वही पृष्ठ 1–2

चित्र साभार – इण्डियन मिनिएचर पेन्टिग – एम एस रन्धावा रोली बुक्स इण्टरनेशनल ललित कला सख्या–12 अक्टूबर 1962 ललित कला अकादमी नई दिल्ली

स्टिल लाइफ पॉल सेजा 1895 98 तैल रग द म्यूजियम आफ माडर्न आर्ट न्यूयार्क

कला में यथार्थ और अमूर्तन

१२६८५

डॉ शेफाली भटनागर *

कला सदैव अमूर्त होती है क्योकि वह कलाकार के भावो की अभिव्यजना हाती है। मानव ने प्रथम बार खडिया गेरू या कोयला हाथ मे लेकर अपनी गुहा–भित्तियो पर अपने मानस मे घुमडते हुए प्रभावो को रूपायित करने के लिए जब रेखा खीची होगी कला उसी क्षण से अमूर्त है क्योकि प्रकृति मे रेखा नही होती है। उसका निर्माण मानव ने किया है। कला कल्पित रूप की अभिव्यजना है और रेखा द्वारा ही इसका रूपाकन होता है। खिचित रेखा एक सकेत का अकन है और वह सकेत कलाकार की भावनाओ से रूपान्तरित हो हमे कला रूपो मे सम्प्रेषित होता है [1]

आदि मानव ने अपने अनगढ और अशिक्षित हाथो से जो भी चित्रित किया उसमे उसके अदम्य भावो की तीव्र अभिव्यजना थी उसमे कही भी दृश्य रूपो को ज्यो का त्यो चित्रण करने का कोई प्रयास नही था। वह अपनी उदर पूर्ति के लिए जब आखेट को निकला तो अपने अनुपात मे अत्यन्त विशालाकार भैसा देखा जो अपने घातक सीगो से उस पर कभी भी धावा बोलकर उसके प्राण हर सकता था। परन्तु क्षुधा पूर्ति के लिए उसका शिकार करना भी आवश्यक था। अत वह भैसा उसके मानस पर पूरा छाया रहता था। यही कारण है कि अपने मानस को 24 घण्टे मनोग्रस्त करने के कारण उसने अपनी गुहा–भित्तियो और छतो पर उसे बारम्बार चित्रित किया। लगभग इन सभी रूपो मे हमे उसका छोटा सिर विशालाकार शरीर और अत्यन्त नुकीले व बडे–बडे सीग दिखायी देते है। इन रूपो मे एक विशेषता यह भी है कि सीग सम्मुख मुद्रा मे और चेहरा व शरीर पार्श्वगत मुद्रा मे है। यह चित्र दृश्य रूपो के साराश है और आज इनको कलाकृति का उत्कृष्ट उदाहरण माना जाता है। फिर भी यह रूप दृश्य रूपो से पृथक नही है।

पॉचवी चौथी शती ईसा पूर्व यूनान मे जिस शास्त्रीय कला का उद्‌भव और विकास हुआ था वह दृश्य रूपो पर आधारित होते हुए भी मानवीय रूप की आदर्श सकल्पना को रूपायित करती थी। यदि गहनता से इसके बारे मे सोचा जाये तो यह दृश्यमूलक कला नही है। चित्र रिलीफ और मूर्ति सभी शिल्पो मे आकतियॉ दृश्य रूपो का आदर्श और सरलीकरण हैं और जब भी कलाकार किन्ही विशेष आदर्शों और सोच को लेकर कला सृजन करता है उसी क्षण कला रूप दृश्य रूपो से विछिन्न हो जाते है और अमूर्त भी। यह भी कहा जा सकता है कि मूर्त त्रिआयामी आकृति और रूपो को ज्यो ही द्विआयामी सतह पर रगो रूपो और रेखाओ मे परिवर्तित किया जाता है कलाकति उसी क्षण अमूत हा जाती ह। पॉचवी शती इस्ा पूव के पार्थीनान फ्रीज मे रूपायित मानवीय व घाडा की आकतियॉ क्या मूत रूप कहे जा सकते ह। इसी प्रकार वीनस अपालो आर डिस्कस फेकते हुए युवक भी उदाहरण हे।

दृश्य रूपो पर आधारित रेनासा कला अपने शीष पर पहुच गयी थी जहॉ कलाकारो ने केवल मानवाकतिया की ही नही बल्कि प्राकृतिक वातावरण वृक्ष हवा वायुमण्डल का भी यथातथ्य चित्रित करने का प्रयास किया। त्रिआयामी आकारो पर छाया–प्रकाश क प्रभावो का लिओनार्दो दा विन्ची ने सवप्रथम उच्चतम श्रेष्ठता के साथ अपनी प्रसिद्ध कृतियो– मोनालिसा' द वजिन आफ रॉक्स द मैडोना एण्ड चाइल्ड और बाच्यूज मे दिखाये हे। किन्तु यह कतियॉ इसलिए श्रेष्ठ नही है क्योकि इनमे कलाकार आकतिया के यथातथ्य प्रभाव दिखाने मे सफल हुआ हे बल्कि यदि गहनता से विचार किया जाये तो इनमे कलाकार इन आकृतियो द्वारा अपने विशेष विचारो का अभिव्यक्त करने मे सफल हुआ है विशेषकर मोनालिसा मे। जिसके लिए एन्साइक्लोपीडिया ऑफ वर्ल्ड आर्ट मे लिखा है– बैठने वाली की प्रसिद्ध और अक्सर उद्धर्त मुस्कान मोनालिसा की दृश्य रहस्यात्मकता की कुजी है। यह मानवीय चेहरे की एक निश्चल अभिव्यजना और प्रथम सुकोमल अनुप्राणन के मध्य होने वाले परिवर्तन की अति सूक्ष्म स्थिति प्रस्तुत करती हे। यही कारण है कि यह व्यक्ति चित्र बैठने वाले का कितना साम्य दिखाता है हमे ज्ञात नही किन्तु यह स्पष्ट हे आज तक श्रेष्ठ कति इसलिए मानी जाती है क्योकि इसमे कलाकार ने बैठने वाले के प्रति अपनी सूक्ष्मतम भावनाओ का चित्रण किया है और यह सूक्ष्म भावनाए अमूर्त होती है। इसी प्रकार 19वी शती मे कूर्बे के यथार्थवादी स्व चित्रो को भी कलाकार द्वारा अपने को दैवीय पागलपन से प्रदत्त एक प्रतिभावान रोमान्टिक व्यक्ति के रूप देखने का उदाहरण माना जाता है। विन्सेन्ट वान गॉग ने एक स्व–चित्र मे अपना एक स्मारकीय इच्छा शक्ति द्वारा अपनी विक्षिप्तता पर नियत्रण रखते हुए अपना एक शक्तिशाली अध्ययन प्रस्तुत किया है [4] और बीसवी शती मे अमृता शेरगिल का भी यही मानना था कि अच्छा व्यक्तिचित्र श्रेष्ठ कलाकति हो यह आवश्यक नही [5] इन उदाहरणो से यह स्पष्ट है कि कलाकार का उद्‌देश्य कभी भी दृश्य रूपो का ज्यो का त्यो चित्रण करना नही होता है। वह दृश्य रूपो को देखता नही है बल्कि उनका प्रत्यक्ष बोध (परसेप्शन) करता है जो उसके मानस को उसके वशानुक्रम जन्मजात

* डॉ (श्रीमती) शेफाली भटनागर रीडर (चित्रकला) सेवानिवृत्त डा अम्बेदकर विश्वविद्यालय आगरा।
स्टूडियो–87 पटेल नगर आलमबाग लखनऊ – 226 005

द वीनस दी मिलो दूसरी शती ई लूव्र सग्रहालय पेरिस

गुणो और मूल प्रवृत्तियो के अनुरूप प्रभावित करते है और उन्ही मानस बिम्बो को वह अपनी प्रतिभानुसार चित्र पटल पर रखता है। उनमे बाह्य माध्यमो—रगो कैनवास तूलिकाघातो आदि का भी इतना समावेश होता है कि उनको मूर्त रूपो से पृथक मानना पडता है।

पाल क्ली ने सृजन की प्रक्रिया को स्पष्ट करते हुए एक सहजानुभूत क्रिया माना जो कलाकार की विशिष्ट अन्तरात्मा से उपजती है किन्तु उसके चेतन अचेतन अनुभवो बिम्बो और उन पदार्थों व रूपो से भी प्रभावित होती है जिनसे उसने कार्य किया हो। क्ली की कला अमूर्त होते हुए भी मॉन्द्रियाँ और कान्दिन्स्की की कला से इस दृष्टि से भिन्न है कि उसकी कला सदैव प्रकति रूपो से ही प्रेरित है।[6] इस तरह कलात्मक निरूपण मे दृश्य रूपो मे निहित रहस्यात्मक भावना अधिक महत्वपूर्ण है जो कला रूपो की विशिष्टता देती है और वे ही कलाकार की पहचान बनाते है।

इसी प्रकार लिओनार्दो दा विन्ची ने 16वी शती के प्रारम्भ मे ही प्रकृति के वायुमण्डलीय और अद्भुत प्रकाशीय प्रभावो को स्फूमातो' द्वारा चित्रित करने का प्रयास किया। यह प्रभाव पूर्ण रूप से कलाकार के मानस से सृजित और व्यक्तिगत होते है। दृश्य रूपो पर आधारित होते हुए भी भावनात्मक और अभिव्यजनात्मक होते हैं जैसे राफेल रेम्ब्रॉ और जान वरमियर और मोने के चित्रो मे दिखायी देते हैं। यह कुछ ऐसे प्रभाव है जो जन साधारण भी कभी—कभी अचानक किन्ही क्षणो मे महसूस करते है परन्तु न वे उन्हे पकड पाते है और न ही उनका वर्णन कर पाते है। अत यह अवर्णनीय प्रभाव मूर्त कैसे हो सकते हैं? ये भी केवल अन्तरात्मा की गहन अनुभूतियो की अभिव्यक्ति है।

कला कभी भी रिक्तता मे अस्तित्व नही रख सकती है बल्कि यह सम्पूर्ण सामाजिक जीवन मे जटिलता से उलझी रहती है।[7] यह बात अवश्य है कि आधुनिक युग मे पारम्परिक सरक्षण की समाप्ति के बाद कलाकार अब सामाजिक चित्रण के बदले अपनी सवेदनशीलता पर अधिक निर्भर रहने लगा है और फोटोग्राफी के आविष्कार के बाद कला मे दृष्टान्त—चित्रण और व्याख्या मे स्पष्ट अन्तर हो गया है। इससे बिम्ब और प्रतीक मे भी पृथक्करण हो गया है किन्तु कला मे प्रतीकात्मक बिम्ब सदेव श्रेष्ठ माना जाता है। यही कारण है कि पूर्ण रूप से दृश्य रूपो पर आधारित होते हुए माइकेलएन्जिलो की पिएता समस्त युगो और विश्व की कला मे प्रतीक दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण है।

कला की आधारभूत विशेषता अपनी पूर्ण शुद्धता और शक्तिमत्ता के साथ सौन्दर्यपरक सवेदनशीलता होती है। यह परिवर्तित नही होती और कला मे इसी से जीवन्तता आती है किन्तु शुद्ध सवेदनशीलता का कला मे कोई मूल्य नही होता बल्कि जैसे—जैसे मानव सभ्यता मे विविध रास्कृतियो का विकास होता है वे निरपवाद रूप से अपनी आधारभूत सवेदनशीलता को सामाजिक सन्दर्भ के साथ मिश्रित करती जाती है और सन्दर्भ का यही रूपान्तरण कला के इतिहास मे आने वाले परिवर्तनो को समझा सकता है। कलाकार का सबसे प्रमुख लक्ष्य प्रकृति के सन्मुख अपनी सवेदनाओ को साकार करना

होता है। दूसरे शब्दो मे अपने वातावरण के प्रति अपनी सवेदनशीलता पुनर्जीवित करना सबसे अधिक महत्वपूर्ण है चाहे वह परम्परावादी कलाकार हो या आन्दोलनकारी। यही कला को मौलिकता देता है।

कला मे केवल सृजनात्मकता महत्वपूर्ण है और यही कलाकति को महान बनाती है। कलाकार ऐसे अस्पष्ट और अनिश्चित सकल्पनाओ– विश्वजनीन सगति और 'सामूहिक अचेतन से कलाकति को निर्धारित नही मानते है बल्कि वे स्वय सृजन को एक अलौकिक क्रिया मानते है। फिर भी ऐसे कलाकारो को भी रूप और रगो के तत्वो का प्रयोग करना पडता है जो सभी कलाओ मे होते है और ससार ऐसी कलाकति को पहचान देने को तैयार नही है जब तक कि कलाकति मे पारम्परिक कला की ऐन्द्रिय विशेषताएँ न हो।

अपनी सवेदनाओ का प्रक्षेपण करने के लिए मानव को केवल बिम्ब की आवश्यकता होती है। यह चाक्षुक भी हो सकता है और प्रतीकात्मक भी। मानव उत्पत्ति के प्रारम्भ से ही कला मे चाक्षुक–जैविक कला और प्रतीकात्मक–ज्यामितीय कला के मध्य एक लय रही है किन्तु आधुनिक कला मे आज अनिर्णीत द्वन्द्वात्मक प्रतिवाद दिखायी देता है? और कला मे बिम्ब व प्रतीक का सह–अस्तित्व आधुनिक कला आन्दोलन की जटिलता और विच्छेद स्पष्ट करता है ।[7]

रेखाकन काला एव सफेद विजय सिह

प्रतीकात्मक सन्दर्भ प्रस्तुत करने की तुलना मे अपने प्रत्यक्ष अनुभव के प्रति निष्ठावान होना अधिक कठिन है। 19वी शती के अन्त मे प्रभाववादी कलाकारो ने जब केवल चाक्षुक प्रभावो पर आधारित चित्रण किया तो प्रत्येक दृश्य वस्तु को प्रकाश के छोटे–छोटे कणो मे बदल दिया जो केवल रगो पर आधारित थे। विशेषकर क्लॉद मोने ने अपने जीवन के अन्त मे रॉऐ कैथेड्रल के ऊपर भाग का चित्रण करते हुए लिखा– मैने सूर्य के विरोध मे युद्ध प्रारम्भ कर दिया है यह चमक लाने के लिए बहुमूल्य स्वर्ण व पत्थर जडने होगे [8] इसी प्रकार बाद मे वाटर लिली क्रम चित्रो का चित्रण करते समय लिखा था– पानी के अन्दर हिलती–डुलती घास और जीव–जन्तुओ को पानी के अन्दर गति चित्रित करना चाहता हूँ। यदि निकटता से देखा जाए तो मोने के चित्रो मे दृश्य रूपो से कोई साम्य नही है।[9] वे केवल रगो और तूलिका घातो मे कलाकार की विशिष्ट वैयक्तिक चाक्षुक सवेदना के चित्र है। यही कला मे अमूर्तन को जन्म देता है। इस प्रकार के चित्रण ने 20वी शती के अमूर्तन का मार्ग प्रशस्त किया।

इसी प्रकार एमिल बर्नार्ड और पॉल गॉगिन ने दृश्य रूपो मे प्रतीकात्मकता का समावेश कर उनको सरल मनमाने रगो मे रगकर चाक्षुक रूपो को अमूर्त किया। सेजॉ ने भी अपनी व्यक्तिगत चाक्षुक सवेदना को कार्यान्वित करने मे दृश्य रूपो को सरल और स्पष्ट किया कि चित्रीय ससार दृश्य रूपो पर आधारित होता हुआ भी उनसे एकदम पृथक होता है।

घनवाद चिरिको के प्रारम्भिक पराभौतिक चित्र भविष्यवाद सरचनावाद नव–रूपवाद आदि कलाकार के चाक्षुक प्रत्यक्ष बोध पर सगति के सिद्धान्त को लागू करना था। [10] कलाकार वह चित्रित करता है जो वह देखना चाहता है जो प्रकृति मे अमूर्तन का मानवीय या व्यक्तिगत रूपान्तर होता है। निकष्ट चित्रकार एक तुच्छ भ्रामक जीवनहीन सादृश्य प्रस्तुत करता है जबकि श्रेष्ठ चित्रकार अमूल्य अभ्रामक जीवन्त सादृश्य चित्रित करता है। प्रकतिवादी कला' किसी भी रूप मे फोटोग्राफिक नही होती है बल्कि वस्तुपरक ससार के गुण और प्रत्यक्ष अनुभव प्रेषित करती है। उसकी पद्धति चयनात्मक होती है। यह कलाकार द्वारा अनुभूत होता है कि प्रत्यक्ष–बोध अपने आप मे चयनात्मक होता है। हमारी सवेदनाओ की सुस्पष्टता प्रत्येक बारीकी के सम्मिलन पर निर्भर नही करती बल्कि प्रत्येक अनावश्यक के निष्कासन पर निर्भर करती है। कलाकार का कार्य महत्वपूर्ण बारीकियो का चयन करके विशिष्ट डिजाइन मे मिलाना है। यह यथातथ्यता से अधिक मितव्ययता का और अनुकरण से अधिक प्रभाव का प्रश्न है।

वह कला जो दुरुह (दुर्बोध) विचारो के अनुकरण पर आधारित है वह आधुनिक अमूर्तकला का आधार है। अमूर्त कला जो कुछ लोगो को विचित्र और विशिष्ट रूप से आधुनिक लगती है वास्तव मे उन कलाओ के समान उतनी प्राचीन है जा रूप के तत्वो का अध्ययन करती है और ब्रह्माण्ड की सरचना मे समाहित हैं। कला अपने उददेश्य की विविधता विविध मानवीय स्वभाव और मन स्थितियो के प्रति निष्ठा मे आज वैसी ही है जैसा कल था और आगे आने वाले समय मे भी वही रहेगी।

विशुद्ध कला मे जडो तक पहुचने और हृदय के निकट रखने का भाव होता है।

प्रकृति 1996 मिश्रित माध्यम 78 x 78 सेमी अवधेश मिश्र

इगित करता है चाहे हम उसे यथार्थवाद–अमूर्तन चेतन–अचेतन या जीवन–मृत्यु कहे। कलाकार की चेतनता दो ध्रुवो के मध्य डोलती है यदि वह पूर्ण यथार्थवादी है या अमूर्तवादी दूसरा ध्रुव अव्यक्त रह जाता है। कला मे श्रेष्ठ सन्तुलन तब ही हो सकता है जब दोनो ही ध्रुवीय तनावो की अभिव्यजना हो।

मॉन्द्रिऑ का आग्रह था कि कला एक समानान्तर अनुभव है किसी भी रूप मे उसका हमारे बाह्य ससार के अनुभव से तादात्म्य नही हो सकता है। किन्तु ऐसी समानान्तरता एक भ्रम है। नवीन यथार्थता का सृजन समय–अनुबन्धित मानवीय क्षमता के परे है।

अपने एक पत्र मे बारबारा हैपवर्थ ने कलात्मक प्रक्रिया की इस द्वैधवृत्ति (यथार्थवादी एव अमूर्त कला) के बारे मे स्पष्ट किया है– जब मै चित्रण या मूर्ति का सृजन करती हूँ तो मुझे अभिप्राय या मन स्थिति मे कोई अन्तर नही लगता है। एक सा ही लगता है– वही उल्लास एव पीडा रेखा रूप और रगो मे महसूस होती है। कार्य करते और समाप्त होने पर भी वही भावना होती है। दोनो ही पद्धतियॉ एक दूसरे मे प्रवाहित होकर बिना किसी प्रयास के एक दूसरे की वृद्धि करते हुए पूर्ण स्वतत्रता देती है। यथार्थवादी रूप मे कार्य करते हुए जीवन मानवता और पृथ्वी के प्रति प्रेम मे वृद्धि होती है। अमूर्तन मे कार्य करने पर अपने व्यक्तित्व को मुक्ति मिलती सी लगती है जीवन का अवलोकन व प्रत्यक्ष बोध तीक्ष्ण होता है और हम बहुत गहनता से सचालित होते हैं। [11]

कलाकार मे सृजनात्मक प्रक्रिया का यह एक सर्वाधिक उद्‌घाटन करने वाला व्यक्तव्य है और पारस्परिक तनाव' के सिद्धान्त की ओर

सन्दर्भ –

1 रोजर फ्राइ विजन एड डिजाइन पृष्ठ–4

2 Ludwig H Heydenheich reich एनसाइक्लोपीडिया ऑफ वर्ल्ड आर्ट वॉ –IX पृष्ठ 216

3 एच एच अरनासन ए हिस्ट्री ऑफ मॉर्डन आर्ट पृष्ठ 24

4 रॉबर्ट वैलेस द वर्ल्ड ऑफ वान गाग टाइम–लाइफ बुक्स न्यूयार्क पृष्ठ 179

5 अमृता शेरगिल मार्ग प्रकाशन पृष्ठ 96

6 एच एच अरनासन ए हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न आर्ट पृष्ठ 96

7 हर्बर्ट रीड द फिलोसोफी ऑफ मॉडर्न आर्ट पृष्ठ–18

8 नीना कैलिटिना क्लॉद मोने ऑरोरा पब्लिशर्स लेनिनग्राद पृष्ठ–24

9 लेखिका ने म्यूजे द ओरसे पेरिस मे इन मौलिक चित्रो का अवलोकन किया है।

10 हर्बर्ट रीड द फिलोसोफी ऑफ माडर्न आर्ट पृष्ठ–38

11 हर्बर्ट रीड द्वारा उद्धृत द फिलोसोफी ऑफ मॉडर्न आर्ट पृष्ठ–98

चित्र साभार – द म्यूजियम ऑफ माडर्न आर्ट न्यूयार्क से प्रकाशित पिक्चर पोस्टकार्ड–ग्रीक आर्ट जॉन बोर्ड मैन टेम्स एण्ड हडसन लन्दन व्यक्तिगत सग्रह– अवधेश मिश्र लखनऊ विजय सिह वाराणसी।
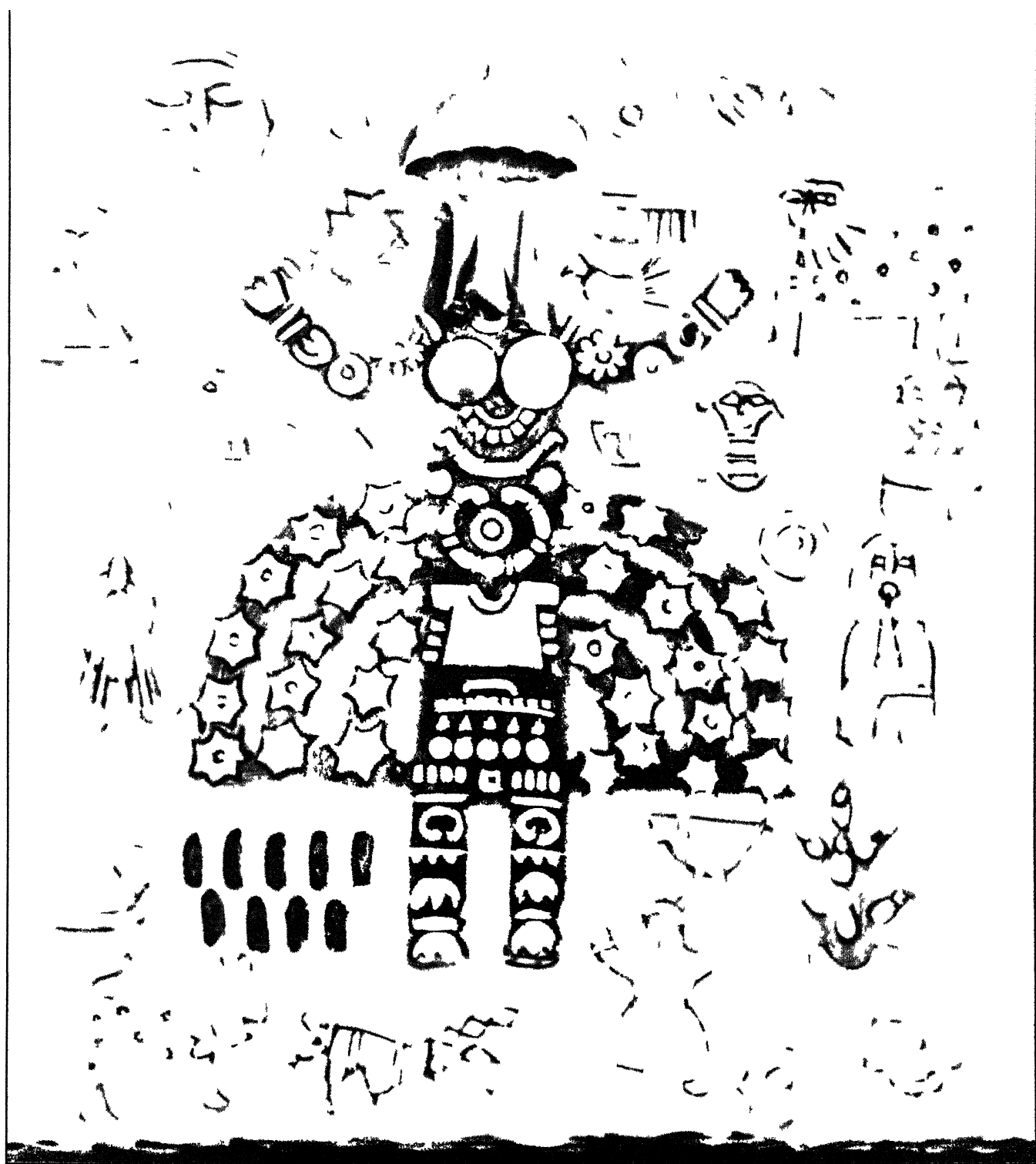
Sanjhi Oil colour 36 X 40 H N Mishra

"SANJHI"
IT IS AN ART OF VILLAGE WOMEN

*Dr H N Mishra **

Since the begining of human civilization art and religion have been closely related It is evident in folk songs folk paintings and folk stories Folk art binds man and society together Through it man also prays and propitiates the supernatural and seeks a sympathetic adjustment with his environment It is a source of emotional security besides displaying various forms of art Sanjhi is such a ritual art When our country celebrates Dashehra and Durgapuja in the villages of Western Uttar Pradesh women celebrate the cult of Sanjhi It combines Indian folk and classical traditions which exist in a continuum

During Navratra enter a village in Western Uttar Pradesh we find in twilight of the setting sun when the villagers and cattle have returned from fields almost in every house women are seen waiving earthen lamps in front of a decorated mural They sing songs This is sanjhi worship a part of sanjhi cult Sanjhi is widely celebrated in certain parts of Punjab and Delhi Haryana and western Uttar Pradesh including Braj and Bundelkhand Rajasthan in Malwa and Nimar in Madhya Pradesh and in Gujrat and Maharastra

Sanjhi is celebrated at the fall of rainy season Its mode and time differ from place to place In some places it is celebrated not in Navratra but pitrapaksha In Rajasthan and Malwa it is a festival of unmarried girls Here the sanjhi is conceived as a maiden who leaves for her father in law s house after the ritual is over In western Uttar Pradesh it is celebrated during Navratra and has close links with Shakti cult In some places the figure of Sanjhi is drawn or arranged on the ground but in western Uttar Pradesh it is modelled and fixed against the wall like a mural As a ritual art Sanjhi has an exclusive distinction It is an art of women old and young Young girls acquire it through participatory practice and by immitation That is why it assimilates changes and innovations in its basic prsistent pattern

To acquaint ourselves with different dimensions of Sanjhi let us enter the village Thola in the Distt Of Saharanpur It is a settlement of three to four hundred houses The people mostly live in Kachha houses The inhabitants of the village are predominently agriculturists There are Hindus and a few Muslims They are divided in high and low castes During Navratra in most of the houses walls are decorated with Sanjhi Moving through narrow and surpentine paths of the village we have a look at the Sanjhis of the different houses In some it is small and in some large The whole village surges around when we begin the shooting of Sanjhi The children are as waywards as they are curious The preparation for Sanjhi starts by the end of pitrapaksha The call for start comes from old ladies They are generally helped by the daughters and daughters in law of the house While modelling Sanjhi women sing traditional songs This ritual group singing and artistic creation of Sanjhi put a touch of recreation in the otherwise hard life of the women of the village

Different parts of the sanjhi are modelled out of clay They are then placed on a wooden plank or in some secluded place on the ground or in a cot and allowed to dry On the blacknight day of the month of Asaug (oct) starts the colouring of different parts of Sanjhi A white base of lime or chalk is provided to them After that some women fix them on the wall and then give them different colours in accordance with their respective concept and choice Some use yellow ochre (Ram Raj Mitti) and Indian Red (Geru) over the white base Now factory made colours pink green yellow and blue usually sold in the village market are mostly used

Where young girls and elderly ladies of the house are educated and are in touch with the cities one may find the use of poster colours Here painters brush has replaced the traditional brush a thin stalk of a kind of reed (called sink) at the one end of which is tied a small ball of cotton To arrange Sanjhi on a wall a base is created by coating it with the paste of cowdung and clay Over that base with the help of cowdung is created an abstract form of Sanjhi With some artists it is small Some model it in rectangular form and some give to it the shape of a temple Some depict it in an abstract human form On this abstract figure of the cowdung are pasted different parts of sanjhi Through this technique different artist create different conceptions of sanjhi where a large clay figure of sanjhi appears difficult to be pasted it is fixed and hung against the help of nails It has to be noted that sanjhi is the anthropomorphized form of the eternal and all pervading Godess So in the conception of the artist it is a female figure modelled as the woman of the region Some artist provide teeth to the figure with rice or small particles of a particular kind of reed Eyes are depicted by using Kauri The figure is decorated with usual regional ornaments Hansuli Har and Mangal sutra in the neck and breast big Navth in the nose Karnaphool and Jhumka in the ears Berva Pahunchi Churhi and Anguthi on the figures The parting of the head carried Mangtika In the hands of the godess are placed Batuwa and Pankha The waist is decorated with Kardhani and ankles with Kara Chhara and Payal Fingeres of the feet are also decorated with rings In certain cases sanjhi is dressed in chappals Sanjhi s dress mostly consists of Lahanga choli and

Studio 14 Pragati Vihar sahastradhara Road DEHRADUN 248001
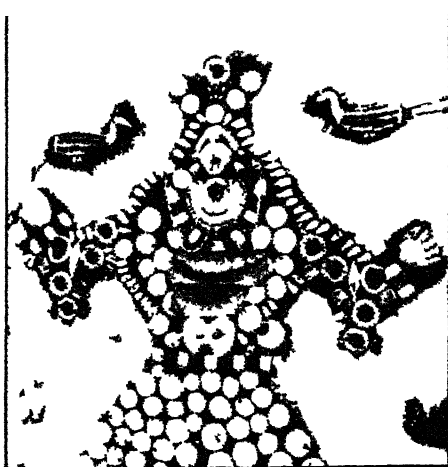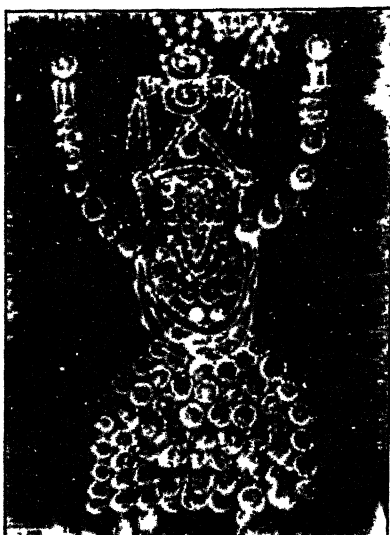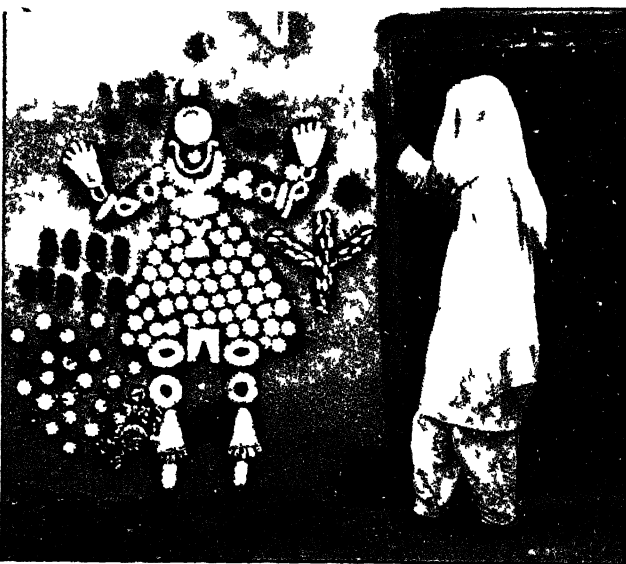
orhani In very few cases she is dressed in saree In some cases Lahanga and choli are made short and they give the impression of being blouze and skirt

The sanjhi is not mere female figure It is an arrangement of different but presistent motifs among which the female figure occupies the most prominent place Since sanjhi is the godess over her head hangs chatra (Umbrella) of silver or of some other metal painted golden yellow Other motifs are drawn from nature from the philosophy of life and from the world around On the right side of the sanjhi is fixed the symbol of sun on the left that of moon and around them are pasted small white stars to provide a supernatural touch to lthe whole arrangement

Peacocks and parrots are show in sitting on a green branch The brother of sanjhi is a must and so is the figure of a thief hung upsidedown Among mundane things are modelled Cow Ox Drummer the party of brassband a man smoking hookah (Hookahwala) and other selling chat (Chatwala) The conception of sanjhi differs from house to house In some it is just a female figure made of triangles In some it is crude and a symbol of a fearful being In some it is a beautiful female figure decorated in ornaments and dress indicating taste and saphistication of the artist

On the day following the sanjhi is fixed on the wall women go to the fields in groups From there they bring back earth(mitti) That mitti is either placed in a pot or it is spread on the ground near the sanjhi In this earth are sown the seeds of barley which sprout quickly This abstract form of ritual art seems to have multi dimenstional linkages in the social cultural life of the people The concept of super natural finds an abstract but realistic portrayal of the woman of the region Like her sanjhi is shown in Parda but not with a deep veil

Magical touches of ritual are quite evident Sowing of barley is a ritual for a good crop On the day of vijay Dashmi the farmers of the region start sowing of Rabi crop Depiction of Sanjhi s brother is magically related to woman s wish of long life for her brother The thief is modelled ward off the possibility of theft in the house Parrots with read beak and green body are supposed to promote prosperity Ornaments and other symbols of married life are believed to safeguard woman s Sohag (Marital state) Women first offer sindur to Sanjhi and then apply in on their forehead Sanjhi seems to have been derived from the shakta cult which can be traced to the days of Harappa and Mohanjodaro In many houses it is modelled as Durga the Singhwahini To Worship sanjhi as Durga both male and female observe fast during Navratra Durga chalisa is recited in front of sanjhi In the evening women of the family and neighbourhood offer ritual worship to sanjhi While worshiping they also sing ritual songs As goes the tradition on the last days of Navratra Sanjhi is dismantled it is ritually thrown away in water in a pond or river or canal

Away from ritual sanjhi is an art of modelling based on the material available in the immediate environment In the grammer of contemporary art this purposive art may be described as tiles mural

Goddes Sanjhi a painted clay assemblage on wall contemporary

Jivan Adalja Folk Symbol (Sanjhi) Ink Drawing

Sanjhi

Photo Courtsy – Dr H N Mishra Dehradoon Search for Roots Lalitkala Akademi New Delhi

व्यक्तिगत वार्ता 2000 कैनवस पर एक्रेलिक 116 x 126 सेमी — एस प्रणाम सिंह

कला, विचार की सशक्त अभिव्यक्ति

डॉ सुषमा राय *

कला 'स्व की सत्ता के साथ सर्वसत्ता के घनिष्ठ परिचय का साक्ष्य है। यह व्यक्ति और समष्टि के बीच एक सामजस्य स्थापित करती है तथा अन्तर्वृत्तियो को परिमार्जित कर हमे स्वस्थ सबल और सतुलित बनाती है। मनुष्य जन्म से ही सवेदनशील सचेतन तथा विचारशील प्राणी है। उसमे निहित 'स्व की भावना उसकी सचेतनता का ही परिणाम है जिसके कारण उसमे विशिष्ट कल्पनाये अनुभूतियॉ आकाक्षाये दृष्टिकोण विचार तथा अभिप्रेरणाये निहित रहती है। व्यक्ति का 'स्व' उसकी आकाक्षाओ के कारण ही उसके सामाजिक एव राजनीतिक जीवन को उद्वेलित करता है।

कला सृजन से कलाकार के अन्तर्जगत का निकटतम सम्बन्ध है। किसी भी कला की उत्पत्ति कलाकार के मानस से होती है। ये शक्तियॉ मनुष्य के अन्तर्जगत मे सस्कार या अन्य किसी रूप मे प्रतिष्ठित होती है और तभी उनकी रचना प्रक्रिया को प्रभावित कर पाती है। जब तक कलाकार मे अत प्रेरणा नही जग पाती तब तक वह कला मे सजीवता नही ला पाता है। यह अत प्रेरणा मन के सचेत स्तरो की अपेक्षा उसके अर्धचेतन मन के स्तर पर जागृत होती है। कविता और चित्र को मनुष्य की स्वप्न प्रवृत्ति का ही एक प्रक्षेपण माना गया है। कल्पना के द्वारा अन्तर्जगत मे छिपी हुई भावनाओ को काल्पनिक रूप दिया जाता है। ये अज्ञात शक्तियॉ हमारे दैनिक जीवन के तत्वो उनके परिवेश और सवेगो से सयुक्त होकर हमारे अन्तर के गहन स्तरो मे कार्य करती है और हमारे जाने बगैर उन शक्तियो के कारण कलाकृति हमारे अन्तर्जगत मे बन जाती है ओर प्रकट होने के लिए माध्यम का सहारा लेकर प्रकट हो जाती है।

मा और बालक ड्राइग पेन एण्ड इक धीरज चौधरी

वर्तमान राजनीति जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे अपना प्रभाव स्थापित किये हुए है जिसका कारण है जनतत्र शासन के अन्तर्गत सर्वाधिकार सम्पन्न जनता का राज्य। अत आज का नागरिक अपने अधिकारो और कर्तव्या क प्रति पूण सजग तथा राजनीतिक क्रियाकलापा म भाग लेने के लिए पूण स्वतत्र ह। इन्ही नागरिका म से व्यक्तियो का एक समूह इस अभिप्रेरणा को रचनात्मक रूप प्रदान करता हे। इसी रचनात्मक अभिप्रेरणा की एक धारा चित्रकला हे जिसके अन्तगत चित्रकार एक ओर शान्ति समृद्धि राष्ट्रीय व अन्तराष्ट्रीय परिस्थितिया का चित्रण करता हे ओर दूसरी ओर समाज की विकृत प्रथाआ हिसा व आतकवादी नीतिया का विरोध अपनी कलात्मक अभिव्यक्ति के द्वारा करता हे। अपनी इन प्रवृत्तियो का विकास चित्रकार सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियो म रहकर करता है। सामाजिक परिवेश उसे हर क्षण प्रभावित करते रहत ह जिससे वह सवेदनशील हा उठता हे ओर स्वत ही सजना की ओर प्रवृत्त होता हे।

भारतीय कला सदैव से ही राजनीति की सहचरी बनकर रही है तथा राजनीतिक प्रभावो के साथ–साथ कला भी प्रभावित होती रही है। इसके उदाहरण भारत मे प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक की कला मे मिलते हे। मध्यकाल मे मुगल और राजपूत रियासतो के विघटन तथा पहाडी शैली की समाप्ति के पश्चात आधुनिक काल के पुनरूत्थान काल की चित्रकला देश मे व्याप्त अग्रेजी–शासन के अत्याचारो तथा नवजागरण और स्वदेशी शासन के सपनो पर आधारित रही। जब अग्रेज–अधिकारी भारतीयो का धन हडप रहे थे उन्हे छोटे से अपराध के लिए भी तोपो के मुह से बाधकर उडा रहे थे उनकी सामूहिक हत्याये कर रहे थे ऐसे समय मे चित्रकार वर्ग का ह्रदय विचलित हो उठा और उन्होने अपने चित्रो के माध्यम से भारत की सोती हुई राष्ट्रीय भावनाओ को जागृत किया और अग्रेजो की जन विरोधी नीतियो को चित्रो के माध्यम से जनता तक पहुचाया।

राजनीतिक प्रचार और प्रसार मे चित्रकारो का अत्यधिक महत्व है। एक व्यग चित्रकार तनिक सी रेखाओ द्वारा दस हजार शब्दो से

* रीडर चित्रकला विभाग रघुनाथ गर्ल्स (पी जी) कालेज मेरठ–250001

युगल क्ले एस जी श्रीखडे

सुन्दरम आदि उच्च कोटि के कलाकारो ने इस समस्या पर चित्रण किये और जनचेतना जगाई।

आज के बदलते राजनैतिक परिवेश मे स्वार्थपरता और जन विरोधी प्रवृत्तियो का बोलबाला बढता जा रहा है। चित्रकार वर्ग इससे अनभिज्ञ नही हे वह इस भ्रष्ट राजनीतिक जाल को अनुभव करता है जिसकी अभिव्यक्ति उसके चित्रो मे होती है। चित्रकार राम चन्द्र शुक्ल गोपाल मधुकर चतुर्वेदी कष्ण खन्ना पी टी रेडडी रामेश्वर ब्रूटा आदि ने निर्भीक होकर इस भ्रष्ट राजनीति के कार्यकलापो को अपने चित्रो के विषय बनाये तथा भ्रष्ट और घृणित राजनीति तथा राजनीतिज्ञो पर चित्रो के माध्यम से तीखी टिप्पणियॉ की।

मनुष्य का प्रत्येक कार्य किसी न किसी मूल प्रवृत्ति की क्रियाशीलता का ही परिणाम है। प्रवृत्तिया वे आधार है जिससे मानव की बौद्धिक क्षमताओ के पथ प्रदर्शन मे व्यक्तियो तथा राष्ट्रो की प्रकति व सकल्प का क्रमश विकास होता है। आधुनिक जीवन की यथार्थताओ समस्याओ और आर्थिक विषमताओ को लेकर जो भाव उत्पन्न हुए उसी के अनुकूल इन चित्रकारो ने अकन किये। जनता का कष्टमय जीवन बुद्धजीवी वर्ग का असतोष शिक्षित बेरोजगारो की दुर्दशा समाज पर पडने वाली पूजीपतियो की काली छाया और काले धन से उत्पन्न विषमताये आदि आज के कलाकारो के विषय बने। चित्रकारो ने अपने अनुभव और क्षमता द्वारा चित्रो के माध्यम से दर्शको और श्रोताओ को चमत्कत कर दिया चौका दिया और आतकित कर दिया तथा उन्हे जीवन के आयामो के निकट पहुँचा कर सोचने के लिए बाध्य कर दिया।

अधिक व्यक्त कर देता है क्योकि वह बौद्धिकता के बहुत अधिक निकट है। चुनाव के समय चित्रकार राजनीतिक दलो के लिए भाति–भाति के पोस्टर तैयार करता है और चुनाव चिन्हो का निर्माण करता हे जिसके द्वारा अशिक्षित जनता भी समझ जाती है कि यह पोस्टर किस दल का है और वह दल जनता के हित मे क्या–क्या कार्य करेगा। चुनाव प्रचार मे बडे–बडे चित्रकारो की भी सहायता ली जाती है। वे जनता के मनोभावो को समझ कर उनकी आवश्यकता और सुख–सुविधा को ध्यान मे रखकर पोस्टरो और चुनाव पत्रो की रचना करते है। आधुनिक चित्रकार विवानसुन्दरम एम एफ हुसैन एव अन्य उच्च स्तरीय चित्रकारो ने चुनाव हेतु पोस्टर बनाकर राजनीति को सहयोग दिया। राजनीतिक योजनाओ और नारो पर भी सशक्त चित्रण करके चित्रकार वर्ग ने इसे सफल बनाने मे सहयोग दिया। उदाहरण के लिए छोटा परिवार–सुखी परिवार के नारे पर चित्रकार वर्ग ने अनेक चित्रण करके जनता को इसके महत्व को समझाया। इसी प्रकार गरीबी हटाओ' दहेज प्रथा उन्मूलन नारी शिक्षा बाल शिक्षा प्रौढ शिक्षा बेगारी उन्मूलन आदि विषयो पर चित्रकार वर्ग ने सशक्त चित्रण किये।

1979 का वर्ष बाल वर्ष' के रूप मे मनाया गया परन्तु समाज से ठुकराये लाखो बच्चो को इसका कोई लाभ नही मिला। भावी पीढी की इस दुर्दशा को चित्रकार वर्ग ने अनुभव किया और उसका मार्मिक चित्रण किया सुकुमार चटर्जी शिव प्रसन्ना मिलन मुखोपाध्याय बिन्दु जेटली धीरज चौधरी अमिताभदास सतीश जोशी एव विवान

कला समस्त जाति और देश के लिए प्रेरणा प्रदान करती है। राजनीतिज्ञो को सदा यह बोध रहता है कि कलाकार राष्ट्र की भावनाओ को अपनी कल्पना से छूकर दीर्घकाल से पडी आदतो एव तर्क के प्राचीन अनुशासन को नष्ट कर सकता है। यही कारण है कि राजनीतिज्ञ सदैव ही कलाकारो और कवियो से उनके भावावेग जगाने की क्षमता के कारण भयभीत रहता है। जब कभी कोई आन्दोलन होता है या बदलाव की स्थिति आ जाती है तो कवि लेखक साहित्यकार एव चित्रकार अपने–अपने माध्यम से अपनी समीक्षात्मक दृष्टि जनता के सामने रखते हैं और देश तथा परिस्थितियो को आधार मानकर कला सर्जना करते है। कला पूर्ण रूप से व्यक्तिनिष्ठ होती है। चित्रकार अपनी आन्तरिक शक्ति से उसका सशक्त अन्वेषण करता है जो चित्र का महत्वपूर्ण अग होता है और विचारो की सशक्त अभिव्यक्ति भी।

चित्र साभार – ललित कला कान्टेम्प्रेरी स 29 व्यक्तिगत सग्रह – श्री एस जी श्रीखडे (लखनऊ) श्री एस प्रणाम सिह (वाराणसी)

नेचर स्केप जल रग – मनोहर कौल

युगल क्ले एसजी श्रीखडे

सुन्दरम आदि उच्च कोटि के कलाकारो ने इस समस्या पर चित्रण किये और जनचेतना जगाई।

आज के बदलते राजनैतिक परिवेश मे स्वार्थपरता और जन विरोधी प्रवृत्तियो का बोलबाला बढता जा रहा है। चित्रकार वर्ग इससे अनभिज्ञ नही है वह इस भ्रष्ट राजनीतिक जाल को अनुभव करता है जिसकी अभिव्यक्ति उसके चित्रो मे होती है। चित्रकार राम चन्द्र शुक्ल गोपाल मधुकर चतुर्वेदी कष्ण खन्ना पी टी रेडडी रामेश्वर ब्रूटा आदि ने निर्भीक होकर इस भ्रष्ट राजनीति के कार्यकलापो को अपने चित्रो के विषय बनाये तथा भ्रष्ट और घृणित राजनीति तथा राजनीतिज्ञो पर चित्रो के माध्यम से तीखी टिप्पणियॉ की।

मनुष्य का प्रत्येक कार्य किसी न किसी मूल प्रवृत्ति की क्रियाशीलता का ही परिणाम है। प्रवृत्तिया वे आधार है जिससे मानव की बौद्धिक क्षमताओ के पथ प्रदर्शन मे व्यक्तियो तथा राष्ट्रो की प्रकति व सकल्प का क्रमश विकास होता है। आधुनिक जीवन की यथार्थताओ समस्याओ और आर्थिक विषमताओ को लेकर जो भाव उत्पन्न हुए उसी के अनुकूल इन चित्रकारो ने अकन किये। जनता का कष्टमय जीवन बुद्धजीवी वर्ग का असतोष शिक्षित बेरोजगारो की दुर्दशा समाज पर पडने वाली पूजीपतियो की काली छाया और काले धन से उत्पन्न विषमताये आदि आज के कलाकारो के विषय बने। चित्रकारो ने अपने अनुभव और क्षमता द्वारा चित्रो के माध्यम से दर्शको और श्रोताओ को चमत्कत कर दिया चौका दिया और आतकित कर दिया तथा उन्हे जीवन के आयामो के निकट पहुँचा कर सोचने के लिए बाध्य कर दिया।

अधिक व्यक्त कर देता है क्योकि वह बौद्धिकता के बहुत अधिक निकट है। चुनाव के समय चित्रकार राजनीतिक दलो के लिए भाति–भाति के पोस्टर तैयार करता है और चुनाव चिन्हो का निर्माण करता है जिसके द्वारा अशिक्षित जनता भी समझ जाती है कि यह पोस्टर किस दल का है और वह दल जनता के हित मे क्या–क्या कार्य करेगा। चुनाव प्रचार मे बडे–बडे चित्रकारो की भी सहायता ली जाती है। वे जनता के मनोभावो को समझ कर उनकी आवश्यकता और सुख–सुविधा को ध्यान मे रखकर पोस्टरो और चुनाव पत्रो की रचना करते है। आधुनिक चित्रकार विवानसुन्दरम एमएफ हुसैन एव अन्य उच्च स्तरीय चित्रकारो ने चुनाव हेतु पोस्टर बनाकर राजनीति को सहयोग दिया। राजनीतिक योजनाओ और नारो पर भी सशक्त चित्रण करके चित्रकार वर्ग ने इसे सफल बनाने मे सहयोग दिया। उदाहरण के लिए 'छोटा परिवार–सुखी परिवार के नारे पर चित्रकार वर्ग ने अनेक चित्रण करके जनता को इसके महत्व को समझाया। इसी प्रकार 'गरीबी हटाओ' दहेज प्रथा उन्मूलन नारी शिक्षा बाल शिक्षा प्रौढ शिक्षा बेगारी उन्मूलन आदि विषयो पर चित्रकार वर्ग ने सशक्त चित्रण किये।

1979 का वर्ष बाल वर्ष' के रूप मे मनाया गया परन्तु समाज से ठुकराये लाखो बच्चो को इसका कोई लाभ नही मिला। भावी पीढी की इस दुर्दशा को चित्रकार वर्ग ने अनुभव किया और उसका मार्मिक चित्रण किया सुकुमार चटर्जी शिव प्रसन्ना मिलन मुखोपाध्याय बिन्दु जेटली धीरज चौधरी अमिताभदास सतीश जोशी एव विवान

कला समस्त जाति और देश के लिए प्रेरणा प्रदान करती है। राजनीतिज्ञो को सदा यह बोध रहता है कि कलाकार राष्ट्र की भावनाओ को अपनी कल्पना से छूकर दीर्घकाल से पडी आदतो एव तर्क के प्राचीन अनुशासन को नष्ट कर सकता है। यही कारण है कि राजनीतिज्ञ सदैव ही कलाकारो और कवियो से उनके भावावेग जगाने की क्षमता के कारण भयभीत रहता है। जब कभी कोई आन्दोलन होता है या बदलाव की स्थिति आ जाती है तो कवि लेखक साहित्यकार एव चित्रकार अपने–अपने माध्यम से अपनी समीक्षात्मक दृष्टि जनता के सामने रखत है और देश तथा परिस्थितियो को आधार मानकर कला सर्जना करते है। कला पूर्ण रूप से व्यक्तिनिष्ठ होती है। चित्रकार अपनी आन्तरिक शक्ति से उसका सशक्त अन्वेषण करता है जो चित्र का महत्वपूर्ण अग होता है और विचारो की सशक्त अभिव्यक्ति भी।

चित्र साभार – ललित कला कॉन्टेम्प्रेरी स 29 व्यक्तिगत सग्रह – श्री एसजी श्रीखडे (लखनऊ) श्री एस प्रणाम सिह (वाराणसी)

नेचर स्केप जल रंग – मनोहर कौल

मनोहर कौल

*डॉ किरन प्रदीप **

कुछ ऐसे व्यक्तित्व जो इतिहास बनकर रह जाते हैं युगो–युगो तक उनके कृतित्व प्रेरणास्रोत बने रहते है ऐसे ही अविस्मरणीय हस्ताक्षर मनोहर कौल थे जिन्हे कला जगत आदर्श की तरह महत्व देता हुआ भारतीय कला के प्रायोगिक व सैद्धान्तिक पक्ष के प्रति उनकी परिकल्पनाओ को साकार करने का प्रयास करेगा। यही उनके प्रति सच्ची श्रद्धाजलि होगी। शोध पत्र के रूप मे प्रस्तुत है डॉ किरण प्रदीप जी द्वारा इस सवेदनशील और बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न कलाकार के व्यक्तित्व कला यात्रा व अमूल्य दर्शन पर एक आलोक –

आधुनिक परिवेश मे जहा कला पूर्णतया कलाकार की अमूर्त भावनाओ की अभिव्यक्ति हे जहा भारतीय कला अपने वास्तविक परिधान को उतारकर आधुनिक पाश्चात्य आवरण को धारण कर रही है कला की पुरानी परम्पराए लुप्त होकर मात्र माडर्न शब्द मे सिमट कर हीन हो रही हैं ऐसे मे यथार्थ परिदृष्टि और ऐन्द्रिक सौदर्य को ध्यान मे रखते हुए एक कलाकार प्रकृति की गोद मे क्रीडा करते हुए उसके आध्यात्मिक सौदर्य को साकार कर रहे है– वह हैं– मनोहर कौल।

मनोहर कौल ऐसे कला जगत मे विद्यमान है जहॉ कलाकार अपने चित्रो को लैण्डस्केप तो कह देता है परन्तु प्रकृति का वाह्य सादृश्य कही भी न होने पर वह मात्र अमूर्तता[1] के आवरण से आच्छादित आमोद प्रतीत होता है। उनका विचार है कि वह अपनी कल्पना मे उस आन्तरिक सौन्दर्य का ध्यान करते हैं और जिस प्रकार आत्मा का कोई निश्चित रूप नही होता उसी प्रकार उनके हृदय मे स्थित भाव अमूर्त बनकर कैनवास पर रगो से क्रीडा करते हैं। ऐसे वातावरण मे मनोहर कौल स्वय को इन कलाकारो से बहुत दूर रखते हुए ईश्वरीय सृष्टि–प्रकति के अनुपम सौदर्य को चित्ररूप देने मे सलग्न हैं। वह एक गायक की भाति प्रकृति चित्रो मे सगीतात्मकता को प्रस्तुत करते है और वडर्सवर्थ की भॉति प्रकति की पूजा करते है।

काव्य सदृश रस के आस्वादन कल्पना द्वारा अभिव्यक्त होने पर भी यथार्थ सदृश रूप रमणीय वर्ण कलात्मक अभिव्यजन को प्रस्तुत करने वाले सन्त कलाकार मनोहर कौल का जन्म 21 सितम्बर 1925 ई मे श्रीनगर (कश्मीर) मे कला साहित्य सुरुचि सम्पन्न परिवार म हुआ जहा से बालक मनोहर को सदैव प्रेरणा मिलती रही। इनके पिता श्री कण्ठ काल काश्मीर मे एस पी कालिज म अग्रजी साहित्य क अध्यापक एवम विद्वान थे। इनके परदादा श्री सहजराम एक चित्रकार होन के साथ–साथ उर्दू, फारसी अरबी एव काश्मीरी भाषा म कविता रचते थे यहा तक कि पोथियो की लिखाइ भी वह स्वय करते थे।

बालक म्नोहर को कला–प्रतिभा विरासत मे अपने परिवार से मिली परन्तु चित्र रचना की प्रेरणा का आधार अपने परदादा को न मानकर वह प्राकतिक सौदर्य को मानते है जो उनके चारो ओर कण–कण मे विद्यमान था। काश्मीर के प्राकतिक सौदर्य को आधार बनाकर उन्होने बिना किसी की प्रेरणा से बाल्यकाल मे अपनी स्कूल की कॉपियो मे 'स्केच' प्रारम्भ कर दिया।[2] यही से इनकी कला–अभिरुचि के चिह्न दृष्टिगोचर होने लगे परन्तु इस क्षेत्र मे उन्हे बहुत सघर्ष करना पडा क्योकि भारत मे कलाकार का भविष्य सुरक्षित न होने के कारण उन्ह परिवार की ओर से कला क्षेत्र मे जाने की अनुमति नही मिली। परिणामत मनोहर ने अपने मन को समझाकर शिक्षा जारी रखते हुए कला को एक डाइवर्जन के रूप मे लिया।

परिवार की इच्छानुसार कला को गौण रखकर इन्होने एम ए अर्थशास्त्र मे दाखिला ले लिया परन्तु उनके कॉलिज के समीप ही पोलीटेक्नीक इन्स्टीटयूट था जहा वह अपनी कक्षा से भागकर चले जाते थे। इससे इन्हे डाट पडती थी।[4] परन्तु शनै शनै जब इनके पिता ने इनकी लगन देखी तो श्रीनगर मे 'सर ए एस टेक्नीकल इन्स्टीटयूट' मे ललितकला के अध्ययन के लिए दाखिल करा दिया। यहा अध्ययन करते हुए इन्हे अपने शिक्षक प्राचार्य ज्योतिष चन्द्र मुखर्जी से चित्रण की प्रेरणा मिली जो काश्मीर के सौदर्य को आधार बनाकर लैण्ड स्केप' चित्रण करते थे। इसके अतिरिक्त कुछ प्रेरणा इन्हे दीनानाथ बाली की प्रदर्शनी देखकर मिली जो एक काश्मीरी चित्रकार है।[5] दीनानाथ बाली को चित्रण करते देखकर इन्होने प्रयोगात्मक क्षेत्र मे जल रग जैसे कठिन माध्यम से चित्रण करना सीखा। इसके अतिरिक्त अपने ड्राइग टीचर जगन्नाथ से इन्होने

* वरिष्ठ प्रवक्ता चित्रकला विभाग कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय मेरठ

प्रारम्भिक शिक्षा पर्याप्त था।

ज्योतिष चन्द्र मुखर्जी और दीनानाथ वाली से प्रथम प्रेरणा लेकर उन्होंने अपने मित्र पी.एन. काचरा के साथ साइकिल पर घूम-घूम कर प्रत्यक्ष चित्रण प्रारम्भ कर दिया। काश्मीर का सौंदर्यमयी प्रकृति के विभिन्न आकार, रूप, रंग, प्रकाश, ऋतु, वातावरण आदि का अध्ययन करते हुए इन्होंने प्रकृति का एक रमणीय संसार चित्रपट पर बनाना शुरू कर दिया।

काश्मीर में कला शिक्षा और नैसर्गिक वातावरण से प्रेरणा लेकर 1948 मे मनोहर कौल दिल्ली आकर सेन्ट्रल ब्राडकास्टिंग म नौकरी करने लगे। इससे चित्र बनाने के लिए इन्हे समय कम मिलता था परन्तु फिर भी वह चित्र बनाते रहे। 1954-55 के लगभग इनका स्थानान्तरण न्यूज कास्टिंग डिपार्टमेंट म हो गया जहा इन्हे सुबह 6 00 बजे स 8 00 बजे ओर शाम 6 00 से 8 30 तक कार्य करना होता था। बाकी समय म वह पुस्तकालय मे जाकर अध्ययन करते थ क्योकि चित्रण के साथ-साथ उनकी रुचि लेखन मे भी थी।

दृश्य चित्र जल रग मनोहर कौल

चित्रकला के इतिहास का अध्ययन करते हुए उन्होने 'ट्रेन्डस' इन इन्डियन पेटिग विषय पर लिखना प्रारम्भ किया और 'हिन्दुस्तान स्टैन्डर्ड' नव 3 1957 मे इनका यह लेख छपा। इस लेख को आधार बनाकर इन्होने इस किताब को लिखना आरम्भ किया। लिखने मे पाच वर्ष लगे। 1961 मे धूमीमल ने इसे प्रकाशित करवाया।

इस प्रकार चित्रण और लेखन कार्य करते हुए आज वह एक प्रतिष्ठित रचनाकार के रूप मे जाने जाते है। वह प्रात चार बजे उठकर ताजगी मे लेखन और चित्रण प्रारम्भ कर देते है। प्रात काल का शान्तिपूर्ण प्रफुल्ल वातावरण वह अपने चित्रो मे प्रस्तुत करना चाहते है। रात्रि के वातावरण और अन्धकार को वह पसन्द नही करते यह उनके चित्रो से भी ज्ञात होता है क्योकि उनके चित्रो मे भी प्रफुल्ल वातावरण की सृष्टि की गयी है। एक प्रकार से इनके चित्रो म अकित प्रकति उददीपन रूप को प्रस्तुत करती है क्योकि वह दर्शक के हृदय मे प्रसन्नता क भावो को जाग्रत करती है।

प्रत्येक व्यक्ति के स्वभाव और जीवन के प्रति दृष्टिकोण का प्रभाव उसकी रचनाओ मे स्पष्ट लक्षित होता है। इसका स्पष्ट प्रमाण रामकुमार ओर मनोहर कोल के चित्रो को देखकर हो जाता है। आज कलाकार वाह्य यथार्थ से दूर मात्र अभिव्यक्ति की आड मे कल्पना का परिणाम अपने चित्रो मे उजागर करता है। मनाहर कौल के चित्र यथार्थ होते हुए भी यथार्थ नही। वह प्रसिद्ध दार्शनिक प्लेटो की भाति कला को प्रकति की नकल न मानकर कलात्मक सृजन की अभिव्यक्ति मानते है। उनके विचार मे प्रकति का खजाना विस्तृत है जिसे अनुकत कर कलाकार अपने पट पर नही सजो सकता[6] मात्र प्रकति का अध्ययन कर इससे प्रेरणा ग्रहण कर सकता है। चालीस वर्षो के अध्ययन तथा साधना का परिणाम मनोहर कौल के चित्रो मे स्पष्ट लक्षित होता है। विभिन्न प्रकार के पत्थर बर्फ चटटान पत्थर के ढर्रो मे उगने वाले फूल झरना गहरी चटटानो के मध्य पिघलती सफेद बर्फ हरीतिमा पहाडी बादलो से घिरे पर्वत चाद का सौदय आदि इनके चित्रो का आधार है।[9] इसी से इनके चित्र रूढिवादिता के दायरे से पूर्णतया दूर है– वह दायरा जहा आज का कलाकार उसे अनटाइटल्ड कह कर छोड देता है। परन्तु मनोहर कौल के चित्र जटिलता से दूर सरल स्पष्ट तथा ऐन्द्रिक रूप से दर्शक को मोह लेते है।

चित्रण के अतिरिक्त जैसा विदित है कि कौल की रुचि लेखन मे भी रही है। ट्रेन्डस इन इण्डियन पेन्टिग और काश्मीर हिन्दू, बुद्धिस्ट एण्ड मुस्लिम आरकिटेक्चर किताबो के लेखक के रूप मे कार्य करने के पश्चात 1988 से वह कला और सास्कतिक पत्रिका कला दर्शन के सम्पादक के पद पर कार्य कर रहे है। इसके अतिरिक्त अपनी प्रतिभा के लिए वह समय-समय पर सम्मानित भी होते रहे है।

शैली वैविध्य

प्रकृति का विशाल भण्डार प्रारम्भ से ही भावुक कलाकारो व कवियो के लिये प्रेरणा स्रोत रहा है। इस विशाल भण्डार से प्रेरित होकर रचनाकार आत्माभिव्यक्ति हेतु विभिन्न नैसर्गिक उपादानो को पट पर सजोता रहा है। प्रत्येक व्यक्ति का स्वभाव व दृष्टिकोण भिन्न-भिन्न होता है। परिणामत उसके द्वारा की गई अभिव्यक्ति एक पृथक स्वरूप ग्रहण कर लेती है। रामकुमार ने प्रकृति को जहा ज्यामितीय रूपो और उदास रगो द्वारा सरलीकृत कर दिया विमल दास गुप्त ने जल की गहराई मे जाकर सागर तल के वक्षस्थल के उपादानो को बिना देखे कल्पना की वही मनोहर कौल के प्रारम्भ से लेकर आज तक चित्रित प्रकृति का प्रस्तुतीकरण रूपो रगो मे अन्तरयुक्त होते हुए कलाकार की शैली की विविधता को स्पष्ट उजागर करता है।

मनोहर कौल द्वारा अकित प्रकृति की आध्यात्मिकता को अनुभव कर प्रतीत होता है कि मानो उन्होने समाधिस्थ होकर ईश्वर से

साक्षात्कार कर इस सौदर्य को पट पर बिखेरा है।[10] फ्रास के प्रसिद्ध कलाकार सेजा ने प्रकति को घनो मे बाटकर सरलीकृत कर अप्राकतिक कर दिया जबकि मनोहर कौल की मान्यता इसके विपरीत है। वह प्रकृति के स्वरूप को विकत न कर प्रत्यक्ष सौदर्य को हूबहू पट पर समेटते है।[11] उनके द्वारा चित्रित प्रकति मे कलाकार का सृजन यथार्थ से साम्य रखता हुआ प्रस्तुतीकरण मे स्पष्ट अन्तर दशाता है। परिणामत समय–समय पर इनकी शैली मे भी परिवतन हाता रहा है। कलाकार की रचना शैली का अध्ययन करने के लिये इसे दो भागो मे बाट लेते है। 1 आरभिक शैली 2 परवर्ती शैली।

(अ) आरम्भिक शैली

मनोहर कौल के व्यक्तिगत रूप से चित्रण का प्रारम्भ 1947–48 से होता है जब उन्होने अपने चित्रो मे काश्मीर के स्वर्गिक सौदर्य को पट पर साकार किया। इनके प्रारम्भिक चित्र इस बात का प्रमाण है कि उन्होने आन्तरिक सौदर्य की अभिव्यक्ति हेतु वाह्य सौदय को नकारा नही है। जिस प्रकार आत्मा की सुरक्षा हेतु शरीर से भी मोह हो जाता है उसी प्रकार प्रकति की आत्मा को पढ कर साकार करने के लिये उन्होने वाह्य यथार्थ को भी समान महत्व दिया है। यही कारण है कि उनके चित्र आत्मीय और ऐन्द्रिक दोनो रूपो से सयुक्त हैं। आत्मीय रूप को महत्व देने के कारण इनकी शैली अभिव्यक्ति पूर्ण और ऐन्द्रिक रूप को महत्व देने के कारण इनकी शैली यथार्थवादी बन जाती है।

मनोहर कौल के चित्रो मे शकराचार्य पर्वत चेलम हरिपर्वत फार्ट पहलगाव की सडके सेब अखरोट चेरी चिनार आदि के वृक्ष डल लेक फूलो की घाटिया प्राय दृष्टिगोचर होती है। इन उपादानो से प्रेरित होकर इनके चित्रो मे कही झील का शान्त जल है तो कही पुष्पो की विस्तीर्ण क्यारिया कही ऊँचे–ऊँचे पर्वत है तो कही चिनार वृक्षो की लम्बी–लम्बी कतारे कही ग्रामीण वातावरण तो कही बर्फीली चोटिया लक्षित होती है।[12] इन रणमीण दृश्यो के साथ–साथ मनोहर कौल ने इन प्रारम्भिक चित्रो मे फ्रेगनार्ड तथा वेटो की भाति स्वप्निल ससार की सृष्टि की है। प्रकृति मे जिस प्रकार ऋतुए परिवर्तित होती है उसी प्रकार समय–समय पर वातावरण का बदलता प्रभाव इनके चित्रो मे स्पष्ट लक्षित होता है। ग्रीष्म की तपिश सर्दियो का एकाकीपन बसन्त की उत्फुल्लता वर्षा की फुहार–ये चार ऋतुए इनके चित्रो का आधार स्वरूप रही हैं। इन्होने अपने चित्रो मे प्रकति के विभिन्न मूडस को काश्मीर के दृश्यो के माध्यम से प्रत्यक्ष उकेरा है।

मनोहर कौल की प्रारम्भिक शैली की तुलना अन्य कलाकारो से करने पर ज्ञात होता है कि रामकुमार ने प्रारम्भ से आकतियुक्त 'सिटी–स्केप' को घनवादी शैली मे बनाया है। बिमलदास गुप्ता ने अपनी स्मृतियो से बरहमपुर तथा दक्षिण भारत के यथार्थ दृश्यो को कल्पना से सजोकर दर्शाया और निर्मल कपूर ने सबसे पृथक पूर्णतया अमूर्त अकन किया है। परन्तु मनोहर कौल के चित्र प्रत्यक्ष अनुभव पर आधारित यथार्थ है।

(ब) परवर्ती शैली

पचास के दशक के प्रारम्भ मे मनोहर काल की शैली मे परिवर्तन हुआ। प्रारम्भिक यथार्थ चित्रो की तुलना मे इस समय इनकी शैली रचनात्मक दृष्टिकाण से परिपक्व बन गइ। 195 –52 मे वह बिमलदास गुप्त के सम्पर्क मे आए और तेल रगो से चित्रण प्रारम्भ कर दिया। तत्कालीन कलाकार पाश्चात्य प्रभाव से अप्रत्यक्ष रूप से पकति को अमूत बनाने मे रुचि ले रहे थे इसके विपरीत मनोहर कौल उस धारा मे न बहकर प्रकति का आध्यात्मिक रूप देने मे जुटे रहे।

काश्मीर के दृश्य सादर्य को आध्यात्मिक रूप देने के अतिरिक्त 1952–53 मे जब इन्होने तेल रगो से विशाल चित्रो का बनाया तो उस समय इनके चित्रण का आधार था– हिमालय। वे हिमालय के शान्त वातावरण के प्रशसक हे ओर उन्होने हिमालय के सुदूर क्षेत्रो मे पश्चिम से पूर्व तक विचरण किया। सवजीत सिह के चित्रा तथा 1947–48 मे हुइ निकोलस रोरिक के चित्रो की प्रदशनी को देखकर इन्हे हिमालय को चित्रित करने की विशष प्रेरणा मिली।

दृश्य चित्र जल रग मनोहर कौल

मनोहर कौल के विचार मे हिमालय के आश्रय मे कलाकार की कल्पना का उठान होता है। वे अपना हिमालय के प्रति आकर्षित होना पूर्व जन्म के सस्कार मानते हैं। इनके मत मे उसमे कोई चुम्बकीय शक्ति है जा उन्हे चित्रण के लिए अपनी ओर खीचती है।[16] कौल ने हिमालय मे जिस वातावरण का अनुभव किया उसे ही हिमालय शृखला के चित्रो मे साकार किया है। हिमालय की गभीरता बर्फ का सौदर्य उस पर उगने वाले वृक्ष सभी को मनोहर कौल ने इस प्रकार से चित्रित किया है कि वे चित्र प्रतीत न होकर वास्तविक प्रतीत होते हैं और हम उसी शक्ति का अनुभव करते हैं जो ईश्वरीय है। एक और प्रमुख विशेषता जो इनके चित्रो मे रही वह है– प्रकृति का मूड। जहा एक ओर इन्होने अपने प्रारम्भिक चित्रो मे काश्मीर

क प्राकतिक सादय को चित्रित किया है वही इस समय के इनके चित्र पवत के विभिन्न मूडस का दर्शाते हे। पर्वता की गुरुत्वता महानता रहस्यात्मकता शान्ति आध्यात्मिकता इनके चित्रा मे स्पष्ट दृष्टिगोचर हाती हे। पवत पर स्थित वृक्ष बर्फ झरने आदि चित्रकार की तूलिका का स्पश पाकर सशक्त हो गए है।

इन्हाने सम्य–समय पर हिमालय श्रृखल' के चित्रो की प्रदशनी लगाइ जिनकी प्रशसा इनके चित्रा की उत्कृष्टता का प्रमाण हे। 1985 मे आइफैक्स मे इन्होने एक चित्र प्रदशित किया जिसका शीर्षक 'इन्द्रा जी इन कनवर्जन विद लाड शिवा' है यह 'राक फॉरमशन मे बना एक अमूत चित्र हे। यही स इनकी शेली मे अमूत रूपो क प्रयाग की विशिष्टता दृष्टिगोचर होती है जिसमे अमूतता के साथ स्वाभविकता भी हे।[19] ज्ञातव्य है कि अमूर्त होते हुए भी इनके चित्र विकति से दूर हें। विकति के सम्बन्ध मे चर्चा होन पर लक्षित हाता हे कि ऐसे सामाजिक परिवेश म प्राय प्रत्येक कलाकार सामाजिक परिस्थितियो की आड मे विकति को महत्व दे रहा है परन्तु कौल सामाजिक उत्पीडन को जीवन का एक अग मानकर स्वय विष पीकर अमृत सदृश प्राकतिक सौदर्य की छटा को सर्वत्र बिखेरते है।

हिमालय के सौदर्य को आधार बनाकर कौल ने लगभग 30 वर्षो तक तैल रगो से विशाल कैनवास बनाकर प्रकति की असीमितता को दर्शक के सम्मुख रख दिया जिसे देखकर लगता है मानो हम प्रकति की गोद मे आ गए हैं। इसके लिए कौल हरा नीला आदि शीत रगो की तानो को प्रकाशमय वातावरण मे कोमलता से प्रयुक्त करते हैं। यही कारण है कि इनके हिमालय श्रृखला सम्बन्धी चित्रो मे रगो का अपूर्व सौंदर्य है।[20] प्रकृति का विशाल ससार बडे–बडे कैनवास पर दर्शाने के पश्चात मनोहर कौल ने प्रकति के विशेष रूपो को जल रगो के माध्यम से बनाना प्रारम्भ कर दिया।[21] इन चित्रो की प्रेरणा का आधार हिमालय ही है परन्तु इनकी तकनीक धरातल तथा प्रस्तुतीकरण मे मनोहर कौल के जल रगो से रचित चित्र यथार्थ से पृथक सृजनशील चित्रो की श्रेणी मे आ जाते हैं। इनकी शैली अन्य कलाकारो की शैली से नितान्त भिन्न अपना पृथक अस्तित्व रखती है।

मनोहर कौल की शैली का अन्य कलाकारो की शैली से तुलनात्मक अध्ययन करते हुए ज्ञात होता है कि जहॉ एक ओर दासगुप्त ने 'फन्तासी' सम्बन्धी चित्र बनाने के पश्चात 25–30 वर्ष पश्चात जल रगो से चित्रण किया जिसमे रगो को धरातल पर बहाकर लैण्डस्केप' को एक प्रयोग तथा प्रभाव की भॉति प्रस्तुत किया है वही दूसरी ओर कौल के 'लैण्ड स्केप पृथक–पृथक प्रकृति के मूड को प्रस्तुत करते है।

जल रगो की श्रृखला मे बने मनोहर के चित्रो का आधार वर्तमान की तुलना मे अतीत के अनुभव हैं। प्रकाश और रगो का सौन्दर्य इन चित्रो का प्रमुख गुण रहा जिसमे उस श्रृखला के कुछ चित्र प्रभाववादी प्रतीत होते हैं। जहॉ एक ओर इनके चित्र प्रभाववादी विशिष्टताओ से युक्त है वही उनमे एक प्रकार की रोमानी भावना भी दृष्टिगोचर होती है। मनोहर कोल क प्रारम्भिक चित्रो मे यथाथ आर परवर्ती शेली के हिमालय सम्बन्धी तैल चित्रो मे आध्यात्मिकता की भावना प्रमुख रूप से लक्षित होती हे। दूसरी ओर जल रगो से बन अद्यतन चित्रो मे स्वप्निल वातावरण की विशिष्टता को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता हे।[2] इसी सन्दर्भ मे जल रगो की ही एक ओर श्रृखला प्रमुख है जिसमे इन्होने 1980–84 के मध्य बनाए चित्रो की ही भाति प्रकति के मूड को आधार स्वरूप देकर प्रकति को सवथा नवीन आवरण से आच्छादित कर व्यजनात्मक रूप मे प्रस्तुत किया हे। इस श्रृखला के चित्रो को इन्होने म्यूज–टु–मूनलाइट शीर्षक से सम्बोधित किया है। इस श्रृखला के चित्रो मे इन्होने चन्द्रमा के रजत प्रकाश मे प्रकति के रमणीय सौंदर्य को पट पर प्रत्यक्ष सजो दिया जिससे इनके चित्र अभिव्यक्ति पूर्ण बन गए है। यह अभिव्यक्ति कौल के साथ–साथ रामकुमार के चित्रो मे भी दिखाई देती है परन्तु उन्होने प्रकति को घनो मे बाटकर सरलीकत कर दिया ओर 'लेण्डस्केप' शीर्षक होते हुए भी उसमे आकाश पृथ्वी पेड नदी आदि का अप्रत्यक्ष सूक्ष्म आभास मात्र है। कौल के चित्रो मे जहॉ एक ओर हिमालय की विशालता है तो दूसरी और घाटियो की गहराइ एक ओर पाइन वृक्षो की हरीतिमा है दूसरी ओर आकाश की ऊॅचाई जिसे वह अपने चित्रो मे सर्वोपरि मानते है[23] और अपने चित्रो की रग योजना भी वह आकाश के अनुसार निर्धारित करते हैं। इसके विपरीत निर्मल कपूर अन्य उपादानो के रगो के आधार पर आकाश के रगो को निर्धारित करते है। इसी सम्बन्ध मे एक प्रमुख विशेषता ध्यातव्य है कि कौल अपने चित्रो मे आकाश को प्रमुख स्थान देते हुए भी उसे सयोजन मे कम स्थान देकर पर्वत वृक्ष मैदान बर्फ नदी आदि से चित्र रचना करते है।[24]

म्यूज–टु–मूनलाइट श्रृखला चित्रो मे चन्द्रिका की अदभुत छटा से प्रकाश की क्रीडा प्राकृतिक उपादानो मे जो विरोधाभास उत्पन्न करती है उसका रोमानी सौंदर्य इन चित्रो को अभिव्यजनात्मक बनाता है मनोहर कौल और रामकुमार दोनो की अभिव्यजनात्मक शैली मे पर्याप्त रूप से अन्तर है। रामकुमार के चित्रो मे भावनात्मक गूढ अर्थ की अभिव्यजना और मनोहर कौल के चित्रो मे प्रस्तुतीकरण के सौंदर्य की अभिव्यजना स्पष्ट लक्षित होती है। इन अभिव्यजनात्मक चित्रो मे कलाकार ने रात्रि के वातावरण के कारण गहन रगो को प्रयुक्त किया है परन्तु वह रामकुमार के चित्रो की भाति धूमिल नही हैं। रामकुमार के चित्रो मे लगे धूमिल रग इनके जीवन के उदासीन स्वभाव से जुडे हैं। जबकि मनोहर कॉल के रग प्रकृति के स्वाभाविक सौंदर्य को प्रस्तुत करते हैं। म्यूज–टू–मूनलाइट श्रृखला के चित्रो का आधार स्मृति है जिसे उन्होने अध्ययन से अपनी कल्पना मे सजोया है। कलाकार का यह अध्ययन भौतिक चक्षु पर आधारित न होकर अन्त चक्षु पर आधारित है।

सयोजन के अतिरिक्त कौल के दृश्य चित्रो मे एक ओर विशेषता दिखाई देती है। इन्होने अपने चित्रो मे मानवाकतियो को कोई स्थान नही दिया क्योकि उनकी मान्यता है कि इससे प्रकृति का सौंदर्य
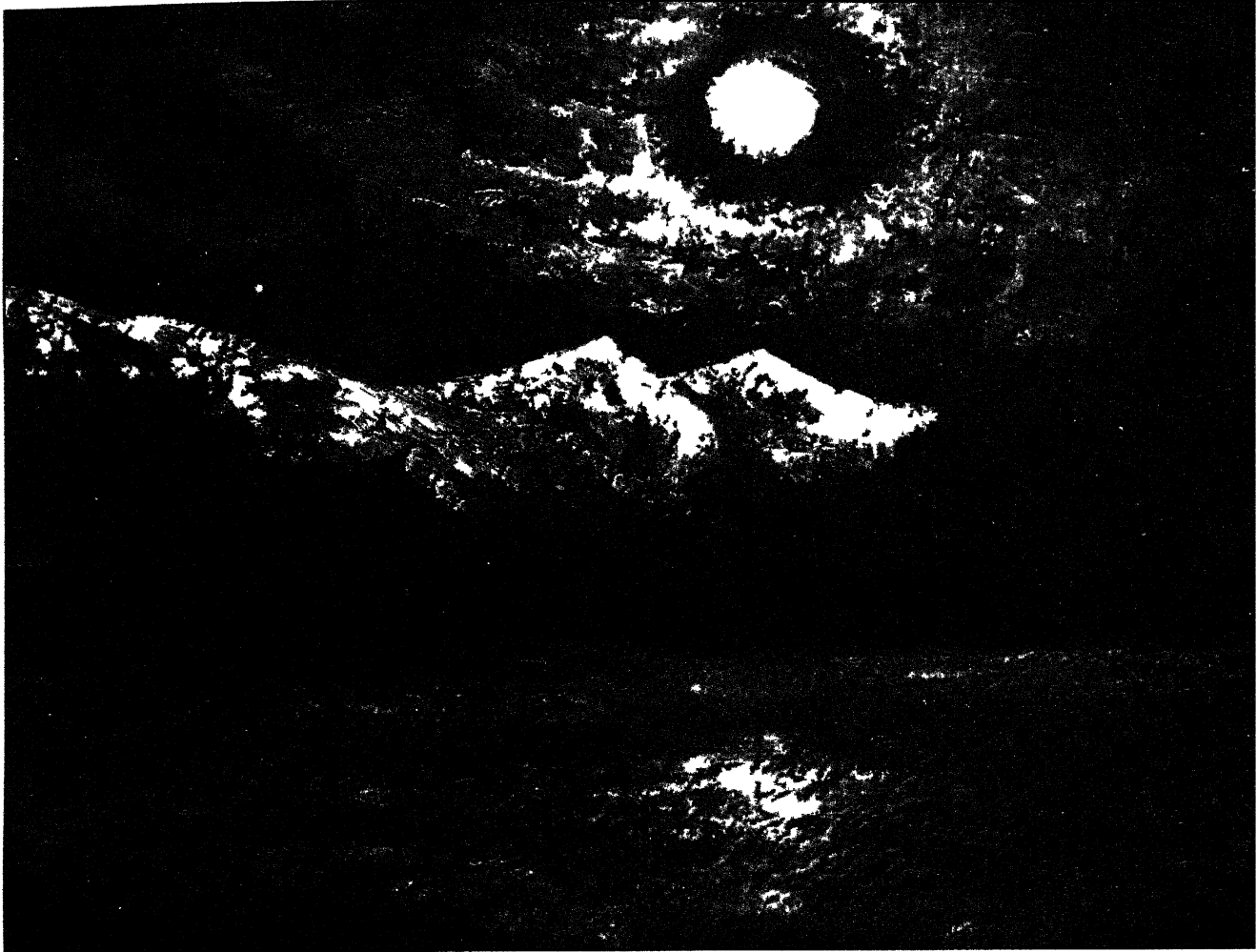
दृश्य चित्र जल रग मनोहर कौल

नष्ट हो जाता है।[25] 1988–89 मे उन्होने मानवाकृतियो के स्थान पर तीन मुखाकृतियो को बनाया जो किन्ही परिचित व्यक्तियो की नही वरन इनमे अकित चेहरे अर्द्ध–अमूर्त है।[26] इसी प्रकार के अनेक चेहरे आज भी मनोहर कौल के 'विजन'[27] मे उभरते है। (उन्होने अभी तक इन चेहरा को चित्रित नही किया है) ये चेहरे व्यक्तिगत पात्र के न होकर सन्त महात्माओ सदृश है[28] जिस प्रकार प्रकृति का कण–कण इनकी कल्पना मे विद्यमान है उसी प्रकार स्पष्ट–अस्पष्ट चेहरे कही न कही इनके अवचेतन से जुडे है यदि वे इन चेहरो को चित्रित करने का प्रयास करे तो सभव है वे अपनी कला मे एक नवीन अध्याय जोड सकते हैं।

सदर्भ

1 श्री दामोदर के घर कोई सन्तान नही थी। रहमान साहेब के आशीर्वाद स्वरूप इनके घर बालक मनोहर का जन्म हुआ परन्तु रहमान साहेब के आदेशानुसार बालक मनोहर को श्री कण्ठ कौल को गोद दिया गया जिनके पालन पोषण से मनोहर की कला रुचि का विकास हुआ। रहमान साहेब को मनोहर कौ अपने 'तृतीय पिता (The third father) मानते है।

व्यक्तिगत वार्तालाप के आधार पर

2 Kaul Manohar I was at attracted by the natural beau of Kashmir व्यक्तिगत वार्तालाप के आधार पर।

3 व्यक्तिगत वार्तालाप के आधार पर।

4 एक बार बालक मनोहर अध्ययन करते बोर हो गए और क समय के लिए चित्रण करने लगे परन्तु उसी वक्त इनके पि घर आए और उन्हे चित्र बनाते देख बहुत क्रोधित हुए और चि फाडकर फेक दिया परन्तु वास्तविकता का ज्ञान होने पर ब पछताए। व्यक्तिगत वार्तालाप के आधार पर।

5 90 वर्ष की आयु के ये कलाकार करनाल मे रहते है।

6 Kaul Manohar Close communion with divine nature varied forms and shapes nuances of colour and varyi light and above all its mysterous and ethereal aspec

nspired me from a ve'y young age I t ansc bed that same d v n ty on to canvas Hai ng from Kashm I ourd myself rea'ly one with motner nature and that of her loveliest most beau'ful catalogue 1991

7 Kaul Manohar I hate n gh I want ight व्यक्तिगत वातालाप क आधार पर।

8 Kaul Manohar you don t know what nature gives you Once you have observed nature very closely one can feel it there s so de'cate nuances of colour no artist has been able to do it even in a more academic and celestial work its very diff cu't to imitate nature व्यक्तिगत वातालाप के आधार पर।

9 Malik Keshav Manohar Kaul The Artist in the Man Rooplekha LVI July 1984 P 75)

10 यहा उनके चित्र चीनी दर्शन से साम्य रखते है। चीनी चित्र दशन का प्रमुख आधार है चित्र बनाने से पूर्व ध्यान करो कौल भी चित्र बनाने से पूव समाधिस्थ अवस्था को महत्व देते है। (चीनी दर्शन का उल्लेख प्रथम अध्याय मे हो चुका है)

11 Kaul Manohar Generally speaking I don t like to disfig ure nature such a beautiful creation I don t want to dis tort it 'व्यक्तिगत वार्तालाप के आधार पर।

12 मनोहर कौल के पास इन चित्रो का कोई रिकार्ड नही क्योकि वे सब बिक चुके है। अत रगीन के स्थान पर कुछ श्वेत श्याम फोटोग्राफ कैटेलाग से लिये गये है।

13 व्यक्तिगत वार्तालाप मे इसका सम्पूर्ण श्रेय उन्होने बिमल दासगुप्ता को दिया।

14 हिमालय ससार का सबसे ऊचा पर्वत तथा बडी–बडी नदियो का उद्गम स्थल है। धर्म पुराण साहित्य मे इसके अनेक विवरण मिलते हैं। पार्वती को शैलाधिराजतनया कहा गया है। पाण्डव युद्ध के पश्चात शान्ति की खोज मे हिमालय की ओर चले गये थे। इसी प्रकार हिमालय प्रारम्भ से ही ऋषियो मुनियो यात्रियो कलाकारो साहित्यकारो को प्रेरित करता रहा है।

15 सर्वजीत सिह और निकोलस रोरिक हिमालय को चित्रित करने वाले दो प्रसिद्ध कलाकार हैं।

16 Kaul Manohar The present exposition of my creation is the record of my deep impression of the Himalaya milieu a soul uplifting phenomenon my main emphasis has ever been to highlight the sublime elements inherent in the Himalayas ranges in all their glory the unique textural varieties of rock formations coming alive in celestial light quoted from the Catalogue Exhibition 1991 (AIFACS)

17 Raj Gopalan V Pain ings of perception The Evening News Nov 28 1985

18 इस चित्र को Australian Trends Commission ने विशेष रूप से पसन्द किया और प्रदर्शनी समाप्त होने से पूर्व ही आस्ट्रलिया ले गये। व्यक्तिगत वार्तालाप के आधार पर।

19 Kaul Manohar Some abstraction is coming automatic without any effort it is very difficult to say Basically I am against distortion व्यक्तिगत के वार्तालाप के आधार पर।

20 Chaitanya Krishna The Hindustan Times Feb 14 1983

21 Kaul Manohar This time I have reverted to the water colour medium in a small format after a lapse of nearly three decades I found this medium as enjoyable as in my initial foravs in the creative field However I have had to have my skills afresh through intensive experimenta tion in order to bring innovations in technique a tough excercise indeed Quoted from the catalogue of solo Exhibition 1991 (AIFACS)

22 इन चित्रो को इन्होने प्रदर्शित नही किया वरन इन्हे देखने का सौभाग्य मुझे इनके घर पर मिला।

23 Kaul Manohar Sky is the colour the base It has its environment there it has its air there it has its colour there sky is guiding force व्यक्तिगत वार्तालाप के आधार पर।

24 व्यक्तिगत वार्तालाप मे जब उनसे इसका कारण पूछा गया तो उनके विचार मे जिस स्थान को प्रमुख माना जाये उसे बडा बनाना आवश्यक नही। सम्पूर्ण चित्र मे कलाकार की इच्छानुसार एक इच बिन्दु को भी महत्वपूर्ण स्थान मिल सकता है। यहा वह प्रभाविता के परम्परागत सिद्धान्त से पृथक हट जाते है।

25 व्यक्तिगत वार्तालाप के आधार पर।

26 एक बार एक आस्ट्रेलियन स्त्री ने इन मुखाकृतियो को देखा विशेष रूप से सराहा एव खरीद लिया। यह मुखाकतिया वाला विशेष चित्र आस्ट्रेलिया पहुच गया। व्यक्तिगत वार्तालाप के आधार पर।

27 उनके मस्तिष्क मे ऐसे रूप आते हैं और बारम्बार कलाकार को चित्रपट पर उभरने के लिए प्रेरित करते हैं।

28 Kaul Manohar I would only enjoy it I don t know whether I would have been able to transfer those vision onto can vas I am getting only faces not figure व्यक्तिगत वार्तालाप के आधार पर।

चित्र साभार – आल इण्डिया फाइन आर्टस एण्ड क्राफ्टस सोसाइटी नई दिल्ली द्वारा आयोजित मनोहर कौल की एकल प्रदर्शनी के कैटेलॉग (मार्च 1998) से
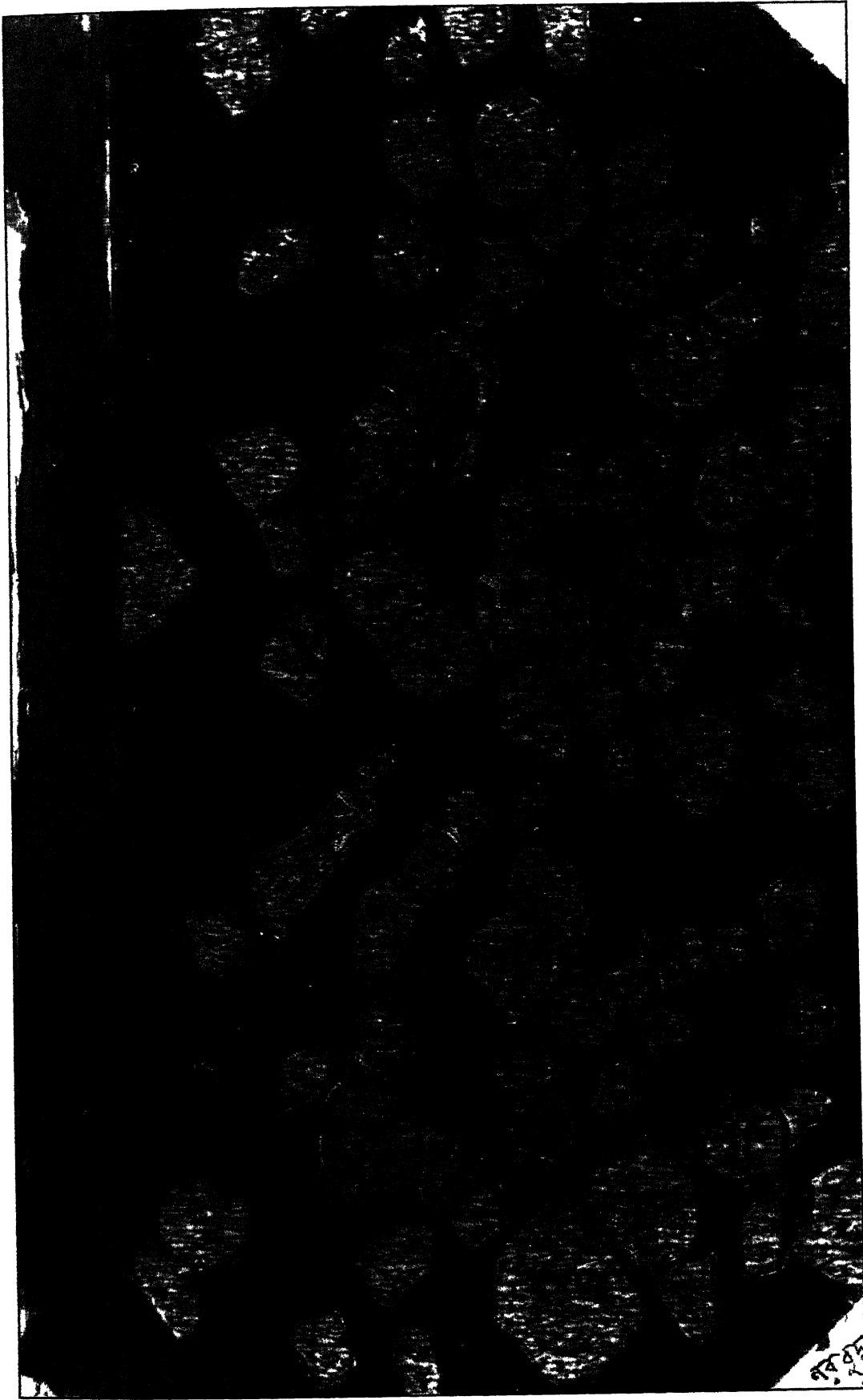
नर बुदबुद जलरग व स्याही रवीन्द्र नाथ ठाकुर

कला-रसास्वादन : आधुनिक चित्रकला के सन्दर्भ में

*डॉ सविता नाग **

कला रसास्वादन वस्तुत जन्म–जात प्रवृत्ति है। सडक पर चलते बच्चे का ध्यान अचानक पानी पर तैरते पेट्रोल पर पडता है और इन्द्रधनुषी रगो की छटा को बार–बार देखने लगता है। एक टाग पर तेज रफ्तार से घूमते लटटू को देखते हुए उसकी निगाह नही थकती। चिडियो को चहचहाते सुनकर वह प्रसन्न हो उठता हे। नरम मिटटी से रूपो को बनाने बिगाडने या रेत के घर बनाते हुए न जाने कितनी भावनाए उमड पडती है। यही उत्साह रुचि सौन्दय के प्रति रुझान जो बीज रूप मे शैशवावस्था से विद्यमान रहता है सस्कार होता है जो स्कूल की शिक्षा के बिना घर पर ही सहज तरीके से पनपता है–यदि उसके सौन्दर्य प्रेम को निरन्तर उत्साह मिलता रहे। यही सस्कार सौन्दर्य–बोध को विकसित और सशक्त बनाता है। मन मे किसी समय बहुत पहले देखी हुई किसी सुन्दर वस्तु का प्रभाव सचित रहता है। कालान्तर मे किसी वैसी ही सुन्दर वस्तु को देखते ही अवचेतन मस्तिष्क मे चित्र उभर आते है और आनन्दानुभूति होती है। इसके विपरीत यदि अवचेतन मस्तिष्क मे कोई दुखद स्मृति होती है तो उससे मिलती–जुलती घटना से या चित्र देखने से हृदय द्रविभूत हो उठता है। व्यक्ति जितना अधिक सवेदनशील होता है उसमे उतना ही अधिक रसानुभूति होती है और इसकी अभिव्यक्ति कला–सृष्टि है।

ग्वर्निका तैल 1937 पिकासो म्यूजियम आफ माडर्न आर्ट न्यूयार्क

कला अभिव्यक्ति का साधन है। कविता नृत्य सगीत चित्र सभी कलाओ के लिए दर्शक या श्रोता का नितान्त प्रयोजन है। चित्र कलाकार और दर्शक के मध्य सेतु का काम करता है। अत कला रचना चाहे व्यक्ति विशेष के लिए हुई हो या समाज के लिए उसे दर्शक का प्रयोजन अवश्य होता है। प्रागैतिहासिक–काल मे समाज कला का प्रयोजन था। प्रागैतिहासिक मानव के लिए कला अधिक अर्थपूर्ण थी क्योकि कलाकार और दर्शक की विचारधारा मे पर्याप्त मेल था। अत रसास्वादन मे किसी प्रकार कठिनाई नही होती थी। उसके बाद कला का सम्बन्ध धर्म से हुआ। चाहे वह भित्ति चित्र हा या लघु चित्र–उसने बौद्ध कला जैन कला ब्राह्मण कला आदि के रूप मे अपनी पहचान बनाया और उसे समाज मे मान्यता व सराहना मिली। शास्त्रीय–सगीत नृत्य चित्र सभी कलाओ को राज्याश्रय धर्माश्रय या समाज की स्वीकति मिली इसीलिए ये कलाये जीवित रही। परन्तु आज की दुनिया मे विशाल दर्शको मे कम प्रतिशत व्यक्ति ही कला के प्रशसक है। दर्शक या तो प्रतिक्रिया रहित मौन रहता है या नकारात्मक दृष्टि अपनाता हे। शहरी सभ्यता और औद्योगीकरण से मनुष्य मे कला के प्रति उदासीनता आ गई है। सूर्यास्तकालीन रगीन आसमान सुनहरी धूप मन्द बयार मे झूमते हुए फूलो को देखने का समय कम रह गया है। व्यस्तता उलझने चिन्ता तनाव से भरी दैनिक जिन्दगी– यही वास्तव बन गया है। इसके साथ ही एक ओर उसमे बौद्धिक विकास से तार्किक विश्लेषणात्मक प्रवृत्ति बढ गई है और दूसरी ओर कला के प्रति सामाजिक उत्तरदायित्व कम हो गया है।

सम्पूर्ण विश्व मे आधुनिक कला का दायरा अत्यन्त व्यापक हो गया है। विभिन्न वाद एव कलात्मक प्रयोग कलाकार को अधिक प्रिय हो गया है। कला का अर्थ जीवन का वर्णनात्मक प्रस्तुति न होकर कलाकार के निजी तरीके से नये वास्तव को जन्म देना हो गया है।[1] वह किसी स्थिति को सीधा–सीधा किसी कहानी के रूप मे प्रकट करने के बजाय नयी तरह की सकेत पद्धति मे नये प्रतीको से प्रकट करता है। उदाहरण के लिए पिकासो की बहुचर्चित 'ग्यरनिका' को हम ले सकते हैं। पुराने प्रतीको और सकेत पद्धति से बधे लोगो को इस तरह की कला मे कोई सार्थकता नही दिखाई देती और उनमे नयी कला के प्रति एक निषेध भाव पैदा होता है। आज बहुसख्यक लोगो के लिए नयी तरह की कला का अर्थ दुरूह होता जा रहा है। यह वास्तव मे सप्रेषण की एक समस्या है जो कलाकार और दर्शको के बीच पैदा हो गई है।[2] वस्तुत
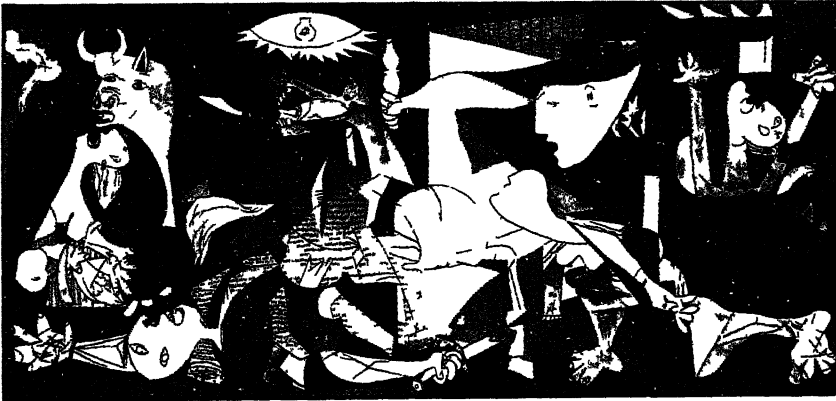
** रीडर चित्रकला विभाग रघुनाथ गर्ल्स पी जी कालज मेरठ।*

वाइस फॉर वाइसलेस 36 X48 तैल हेमराज

कलाकार आखो से देखे गये रूपो को अपनी बुद्धि कल्पना व स्मृति के बल पर बनाता है और अपनी सवेग भावना व विचारो को साकार करता है। नियम परम्परा व शैली के बन्धनो से मुक्त होकर कलाकार स्वच्छन्द होना चाहता है। परिणामत पिछले सौ साल मे कलाकार सामान्य लोगो के जीवन से अधिक से अधिक दूर होता जा रहा है। सामान्य लोग प्राय न समझ मे आने वाली कला को माडर्न आर्ट कह देते है जिसमे कलाकार द्वारा सयोजित नया रूप होता है अथवा अमूर्त होता है। यहॉ तक कि कलाकार रगो के धब्बे ज्यामितिक आकृतियो और लकीरो से तनाव पूर्ण सयोजन चित्रतल पर उतारता है। कभी–कभी तो रूप स्वत निर्मित या आकस्मिक प्रयोग के रूप मे ही होते है जो जन सामान्य की समझ से बाहर होता है क्योकि ऐसे रूप कलाकार के दिमाग की उपज होती है। वस्तुत अप्रत्यक्ष रूप से समाज के मूल दबावो व जीवन की कुठाओ के कारण ही ऐसे चित्र प्रकट होते है।

प्रश्न यह उठता है कि कला का रसास्वादन किस प्रकार हो? कलाकार का बौद्धिक स्तर आम लोगो से पर्याप्त ऊँचा और उसकी अभिव्यक्ति नितान्त निजी होती है चाहे कविता हो मूर्ति हो या चित्र– प्रत्येक कलाकार चाहता है कि उसकी कला दर्शक के मनोभावो को झकत कर दे। ऐसी स्थिति मे कलाकार यदि चित्र को समझने मे दर्शक को मदद करता है तो उसे चित्र का रसास्वादन हो सकता है। परन्तु ऐसी मान्यता है कि कलाकार नही बोलता उसके चित्र बोलते है। यह विचार समकालीन अमूर्त कला के लिए अनुकूल नही अन्यथा कलाकार के भाव और दर्शक की भावानुभूति मे पर्याप्त अन्तर हो सकता है।

प्राय देखा जाता है कि दर्शक चित्र–प्रदर्शनियो मे चित्र का नाम जानने मे अधिक उत्सुक होता है और नाम पढकर चित्र का आशिक रसास्वादन कर लेता है। उदाहरण के लिए रवीन्द्रनाथ ठाकुर का एक चित्र जिसमे सम्पूर्ण धरातल छोटे–बडे गोलाकारो से भरा है जिनमे चेहरे बने हुए है चित्र के नीचे बगला भाषा मे नरबुदबुद लिखा है। शीर्षक पढते ही चित्र का विषय स्पष्ट हो जाता है कि मानव जीवन का अस्तित्व धरातल पर क्षणभगुर पानी के बुलबुले के समान है।

युगल क्ले एस जी श्रीखडे

वस्तुत कला कोई ऐसी भाषा नही है जिसका अर्थ शब्दकोष मे मिल जाये और दर्शक समझ ले। न ही कोई ऐसी प्रस्तुति है जिसे कलाकार ने तो कई महीनो या सालो मे पूरा किया हो और दर्शक उसे कुछ ही पलो मे समझ ले। कला के रसास्वादन के लिए दर्शक को परम्परागत और समसामयिक कला का ज्ञान होना चाहिए। तभी उसे रसानुभूति होगी और वो कला की प्रशसा करेगा।[3] कलाकार मे यदि सौन्दर्य चेतना है तो दर्शक मे सौन्दर्य बोध का होना अनिवार्य है तभी कला आनन्द प्रदान करेगी।

कई बार ऐसा भी देखा गया है कि एक कृति जो पहले कभी बहुत अच्छी लगती थी वह ऑखो को अच्छी नही लगती। दर्शक के मनोभाव के अनुसार चित्र का रसास्वादन होता है दुखी मन से तनावपूर्ण स्थिति मे रसास्वादन कदाचित सम्भव नही। रसास्वादन के लिए दिमाग शात हो और दर्शक के पास चित्र को भली प्रकार देखने कलाकार की भाषा समझने का समय हो तो रसास्वादन सम्भव है।

कला रसास्वादन के लिए दर्शक यदि सहृदयी हो तो अमूर्त चित्र कोई उलझन नही बनता। परन्तु यदि बेकार है हमे तो कुछ समझ मे नही आ रहा है इस प्रकार की आलोचना से चित्र कला वीथिका मे मात्र भ्रमण किय जाय तो कलाकार का परिश्रम और उसका सदेश निरर्थक हो जाता है कला आस्वादन की बात तो बहुत दूर।

❑

1 Works of art are not just descriptive records of life on the contrary each object is a dynamic new reality in creasing life & the areas of our perception J Appaswamy On appreciation P 1

2 सच्चिदानन्द सिन्हा समाज और कला सवेदना' *समकालीन ललित कला* प्रवेशाक 82 पृ 13।

3 By appreciation we train our eyes & minds to recognise and be exhilarated by new farms of beauty J Appaswamy *The critical vision* On appreciation P 2

चित्र साभार – व्यक्तिगत सग्रह श्री हेमराज (नई दिल्ली) श्री एस जी श्रीखडे (लखनऊ) ड्राइग एण्ड पेन्टिग ऑफ रवीन्द्र नाथ ठाकुर ललित कला अकादमी नई दिल्ली पिकासो गैस्टोन डिएल क्राउन पब्लिशर्स न्यूयार्क

Composition 1999 Oil on Canvas 90 cm x 90 cm Awadhesh Misra

VISUAL ARTS SIGNIFICANCE, SYNTHESIS AND CHANGEABILITY

*Dr Vinod Indurkar **

The arts form a historically dynamic system The branches of art are determined by the life material on which they are based and the historical nature of the personality who creates them Like every kind of activity artistic creation objectifies man s essential power in their concrete historical originality The originality is manifested in all the main function of artistic activity i e cognition appraisal creation and communication with the world as well as in self knowledge self assessment self creation self communication of the subject of all the subject i e the artistic self

While formal searches the discovery of new artistic means and the eternal desire to probe the unknown are inherent in art the main spring of artistic evolution lies elsewhere It is social demand and the degree to which a given branch of art is capable of satisfying that demand The evolution of painting and sculpture provides a ready examples The soaring heights they achieved in the Renaissance period were the result of demand for Visual Arts

Primitive peoples knew well the anatomy of animals In cave drawings the portrayals of animals are amazingly accurate and reveal deep knowledge of the structure of these bodies and habits The antique artist was not only conversant with the anatomy of the animal but also with that of man The bringing up of a brave and strong warrior involved gymnastics music and visual arts which were sensitive to beauty and strength of human body The interest of the Greek Visual Arts in the strength and beauty of human body had deep concrete historical roots

Medieval visual art scrutinized the inner world of man and tried to penetrate into his spirit Human flesh was no longer significant in itself The beauty of the nude body was replaced by a cult of body draped in heavy materials reaching to the heels The monk s habit was the most characteristics garment of the Middle Ages It made man shapeless robbing the figure of it s outlines Art was still blind to the anatomical differences between the grown up and the child In Medieval paintings Christ the infant was just a small grown up Renaissance reviewed the cult of the nude body stressing not only its beauty and power but also it s sensual attractiveness The joy of living intellectual and sensuous pleasure informed the Renaissance art which celebrated the female body shown as virtuous by Giorgione earthly and heavenly by Titian and Spiritual by El Greeco Renaissance painters became attentive to the anatomical differences of the age They identified the child the grown up and the old person and discovered the dynamic anatomy of man in movements of various tempos and abruptness at various angles and directions

Lenardo da Vinci thus summed up the leading role of painting in the arts of the Renaissance period i e when on King Mathew s birthday a poet presented him with a work of praising the day when the king was born for the good of the world and the painter gave him the portrait of his beloved the King immediately closed the poet s book turned to the painting and fixed his gaze on it with admiration The poet was very angry and said Oh King read on and you will become aware that it is a subject more profound than the mute painting On hearing himself being admonished for contemplating mute objects the King said Oh poet be silent for you don t know what you are saying the picture serves a better feeling than your work which is intended for the blind Give me something I could see and touch and not only hear and do not blame my choice for having put your work under my elbow and holding the painting in my hands and training my eyes on it my hand themselves wanted to serve a more worthy sense than hearing I believe the relationship between science of artist and the science of the poet should be the same as that existing between the corresponding senses of which they are objects

These are the words not only of an artist who prefers his own occupation to others but also of a theorist who is keenly aware of the leading place of paintings in the arts of the Renaissance period The anti ascetic anti scholastic humanistic thrust of the period its rejoicing

* *HEAD P G Department of Fine Arts Gurunanak Bhavan Nagpur University Campus Nagpur-440010*

Beyond the City 40 Oil on Canvas 75 cm x 90 cm Surendra Pal Joshi

in the splendours of life it s spiritual and sensaous delights could best and most fully be expressed in paintings Genius always appear in those areas of social practice where they are most needed It is not by chance that renaissance produced such great painters and Leonardo Rubens and Titian social demand propelled the visual arts to the summits of the human spirit The same mechanism could be found to be at work in other branches of art

The syncretism of the ancient visual arts brought paintings close not only to drawing but also to literature as witnessed by the narrative character of ancient paintings The distinctions between poetry and visual art were first profoundly analysed by Lessing These distinctions were the result not only of the development or theoretical thought but also of the artistic process itself one of whose trends is enhancing specific distinctions between individual arts

The history of art along with the growing divergence and individualization of the branches of art is witness to a reverse process namely the growing interaction and synthesis of the arts which aquire and independent and individual nature And the process of this synthesis may take a growing number of forms Syncretism was a particular kind of synthesis characteristic of ancient art In that part of synthesis different art forms an organic whole and have not yet branched off from the single primeval historical tree of culture which included in each

Composition 2000 Oil on Canvas 90 cm x 90 cm Awadhesh Misra

of it s phenomenon not only the embryo of various branches of artistic activity but also of scientific philosophical religious and moral consciousness The second form of synthesis in arts is subordination in which one art dominates another Such relationships began to take shape in ancient architecture which interacted with monumental sculputure painting mosaic Architecture dominates in that senthesis sometimes even literature enters into a relationship of sub ordination to architecture in the shape of an inscription Another form of synthesis in the arts is collage of pieces of different arts as in the medieval mysteries and in the 20th century in the Laterna Magica shows in Czechoslovakia The fourth form of synthesis in the art is synthesis in which various arts interact on an equal basis merging to produce something new Thus Opera which became popular in the 18th 19th centuries is a symboisis of drama and music

The 19th and 20th centuries saw the birth of the variety show in which literature music ballet theatre cirucs etc Join together on an equal basis Variety is a mass entertainment addressed to a mixed audience The aesthetic impact it produces has a wholeness about it that makes it possible to talk about the birth of a new art from the equal co existence of several arts The another form of synthesis in arts is a dissolving of one art in another without either being directly represented in the final result or only in an indirect form Such is the relationship between literature and choreography in

Mother and chıld 2000 Clay S G Srıkhande

ballet The lıterary basıs of ballet ıs undoubtedly ımportant but ın the fınal result word ıs not represented That form of synthesıs dıd not develop untıl the 18th century In the next type of synthesıs concentratıon one art drawn on another art whıle remaınıng ıtself and presentıng ıt s artıstıc nature For example photography ıntegrates the experıence of paıntıng and drawıng wıhtout beıng dıssolved ın them the cınema draws on the artıstıc means of paıntıng theatre musıc lıterature etc Thıs type synthesıs ıs to be found ıs such a synthetıcally rıch type of art as theatre whıch ınteracts wıth musıc lıterature paıntıng archıtecture choreography and that wıth photography cınema etc Inspıte of all thıs the theatre retaıns ıt s basıc character In another type of synthesıs one art becomes vehıcle for another art Thıs ıs partıcularly well ıllustrated by televısıon and also ın cınema and photography whıch relate the artıstıc respects of the theatre varıety ballet and other arts wıth varyıng degrees of completeness and effect The last two types of Synthesıs are especıally characterıstıc of modern tıme and appear maınly ın the technıcal arts of 20th century ı e cınema televısıon and photography

Every hıstorıcal perıod has a predomınant branch of art whıch most alternatıvely meets ıt s socıal and aesthetıc needs It changes from one hıstorıcal perıod to another due to the changıng needs and the socıal subject whıch exerts and ınfluence on progress When art comes wıthın the focus of publıc attentıon that created advantages for ıt s development and ıs evıdence of ıncreased demand for ıt In the antıque world the aesthetıc past of the demos expressıng the artıstıc needs of the free cıtızens was the maın force ın artıstıc development that determıned whıch arts would be prevalent Theatrıcal performances and other mass artıstıc cultural actıvıtıes provıde the wıdest scope for spontaneous expressıon of that test The artıstıc demand of antıque democracy orıented art towards popular appeal and stımulated those types of arts whıch addressed themselves to all the cıtızens of the polıs That ıs why the most developed arts at the tıme were sculpture theatre and archıtecture

The Renaıssance perıod gave bırth to the ınstıtutıon of the arts to the ınstıtutıons of patrons of the arts a way of the engagement of art by the arıstocracy Vısual arts were the most frequently patronızed ones The Renaıssance demand for challengıng the ascetıc attıtudes of the mıddle Ages was most fully met by Vısual sensously pleasıng ımages of paıntıngs and sculpture

So at dıfferent perıods dıfferent arts were at the centre of socıal ınterest Accordıngly the art whıch most fully met the socıo artıstıc demands of the perıod became domınat

Photo Courtsy Personal Collectıon Awadhesh Mısra Lucknow Srı S G Srıkhande Lucknow & Mr Surendra Pal Joshı Jaıpur

बिरुड़ाष्टमी पट कुमायूं लोक कला

कुमाऊंनी लोक-कला में अंकित अभिप्राय (मोटिफ)

डा कृष्णा बैराठी *

भारतीय सस्कति व परम्पराओ का सजीव व साक्षात रूप लोक कलाओ मे देखने को मिलता है। लोक कलाये सामूहिक मान्यताओ द्वारा उद्भावित होती है व दिशा पाती है। धर्म सयम आचार–विचार नैतिक मूल्य त्याग उपवास दान दया आदि का सश्लेषण इन कलाओ मे दर्शनीय होता हे। इनमे अकित आकार उक्त घटको का पर्याय होते है। इनकी बनावट सयोजन तकनीक आदि मिलकर विशेष रचना–शैली का निर्माण करते है जो एक क्षेत्र विशेष की सस्कृति व परम्पराओ वातावरण ओर सामाजिक मनोविश्लेषण की पहचान को दर्शाते है। ये समस्त घटक अभिप्रायो अर्थात मोटिफ रूप मे परिभाषित होते है। इसीलिये ये मोटिफ अपने आप मे अत्यन्त महत्वपूर्ण होते है।

कुमाऊनी लोक–कला भी इन अभिप्रायो के माध्यम से अपनी विशेष पहचान लिये हुये है। ये अभिप्राय केसे अपना रूप पाते है किस प्रकार व किन स्रोतो के माध्यम से उद्भावित होत हे यह जान लेना आवश्यक है तभी हम इन कलाओ का मूलाधार व मर्म समझ पाने मे सक्षम हो पायेगे कि केसे ये हमारी रास्कृति के आधार ओर देश की अखण्डता को बनाये रखने की शक्ति व सामर्थ्य रखते हे।

इन कलाओ का मूल आधार हमारी सामाजिक व धार्मिक आस्थाये रही है। हमारे षोडस सस्कार पर्व उत्सव मेले आदि इन्ही आस्थाओ का परिणाम है। परिवार व समाज को एक कडी मे पिरोने वाले ये घटक ही है जो हमे मानवीय धरातल पर एक दूसरे से जोडे रखने मे सहायक होते है। आत्मिक व आध्यात्मिक पक्ष भौतिक पक्ष से कही सशक्त होता है इसमे कही कोई सशय नही। इसी प्रकार ये अभिप्राय न केवल क्षेत्र विशेष या कुमाऊ विशेष की परम्पराओ को दर्शाते है वरन भारत देश के विभिन्न प्रान्तो की लोककथाओ मे सयोजित अथवा अकित अभिप्राया रो जब इनकी तुलना की जाती है तो अनेकता मे एकता' का स्वरूप स्पष्ट हो जाता है। भारतीय दर्शन का प्रतिरूप अथवा प्रतिबिम्ब इनमे मुखरित हो उठता है।

सृष्टि के प्रारभ से ही प्रकृति न कवल रचना की आधारशिला रही वरन जीवन–दाता व पूजनीय भी रही है। प्रकृति को मानव ने देवता के रूप मे स्वीकारा। फलस्वरूप धार्मिक आस्था के रूप मे तो कला मे प्रकृति ने स्थान पाया ही अलकरण व प्रतीक रूप मे भी प्रकृति अभिप्रायो का विशेष स्थान रहा है। कुमाऊ के लोक–चित्रो मे प्रकृति अपने विभिन्न रूपो मे अभिव्यक्त हुई।

सूर्य व चन्द्रमा का अकन यहा अधिकाशत सभी लोक–चित्रो मे हुआ है जो इन चित्रो की लाक्षणिकता मानी जा सकती हे। ज्योति पटट विरूडाष्टमी पटट गोवर्धन पूजा–अकन सूर्य–दर्शन चौकी कृष्ण–जन्माष्टमी पटट दुर्गाथापा बट–सावित्री पटट आदि सभी मे ऊपर की ओर दाये व बाये कोने मे सूर्य–चन्द्रमा को विशेष स्थान दिया गया है। श्री वासुदेव शरण अग्रवाल ने भारतीय–कला मे इस विषय पर उल्लेख करते हुये कहा है कि ये ऐसे प्रतीक है जो वैदिक युग से आज तक लोक मे मान्य है। हिम और ध्रस अर्थात सर्दी और गर्मी के दो रूप चन्द्र और सूर्य है। अथर्ववेद मे इन्हे अग्नि के दो रूप कहा है। यह स्फुट है कि विश्व रचना की इन्द्रमयी प्रवृत्ति ही अग्नि के दो रूप या चन्द्र–सूर्य के रूप मे मान्य हुई। सूर्य स्वय प्रकाश ध्रूव और अपरिवर्तनीय है। चन्द्र सूर्य से प्रकाशित एव क्षयवृद्धि से युक्त है। सूर्य उच्च विज्ञान या बुद्धि का प्रतीक है और चन्द्र इन्द्रियानुगामी मन या प्रज्ञान का प्रतीक है। दोनो ही प्राण–दाता भी है। प्रकाश देने वाले है इसीलिये इन्हे देवता रूप माना गया। उन्हे नमन करते हुये पूजा की दृष्टि से आज भी न केवल कुमाऊ मे वरन भारत के अन्य प्रान्तो मे भी इनका अकन लोक–चित्रो मे अवश्य मिलता है। कुमाऊ मे सुहागिन महिलाये लहगा चोली के साथ जो ओढनी पहनती हैं उसे पिछौड कहा जाता है। इस पिछौड मे भी नव–जीवन की मगल कामना के हेतु चन्द्र और सूर्य के अकन किया जाता है। यज्ञोपवीत सस्कार के समय अकित किये जाने वाले जनेऊ नामक अकन मे सप्तऋिषि मण्डल के प्रतीक स्वरूप सात सितारो का अकन देखने को मिलता है।

शिव पीठ व लक्ष्मी–यत्र मे पृथ्वी को चतुष्कोण (भूपुर) के रूप मे अभिव्यक्ति किया गया है। पृथ्वी को जननी–स्वरूपा मानते हुये मातृ–देवी के रूप मे भी स्वीकारा गया है। ब्रह्माण्ड का अकन समुद्र का अकन भी इन यत्रो मे देखा जाता है। जल मे कमल मछली आदि अभिप्राय भी देखने को मिलते है। समुद्र व जल आदि के अकन कृष्णजन्माष्टमी के पटट व शेष शायी विष्णु पटट मे कथानुरूप देखने को मिलते है। मछली का अकन धूल्यर्घ की चौकी मे भी कही–कही देखने को मिलता है। कृष्ण जन्माष्टमी पटट मे यमुना नदी मे भी मछलियो का अकन गिया गया है। समुद्र का अकन सृष्टि के प्रतीक रूप को दर्शाता है। सहस्र शीर्षा पुरुष नारायण को क्षीर सागर–शायी विष्णु कहा गया है जो अनन्त शेष की शैय्या पर शयन करते है। वृक्षो मे वट–वृक्ष का अभिप्राय लोक–चित्रो मे अत्यन्त महत्वपूर्ण है। बट–सावित्री पटट मे तो वट–वृक्ष का अकन हुआ ही है ज्योति पटट मे भी कमल–पुष्प के दोनो ओर वट–वृक्ष अकित

* अध्यक्ष चित्रकला विभाग कुमायू विश्वविद्यालय अल्मोडा

हिमाचल कुमायू लोक कला
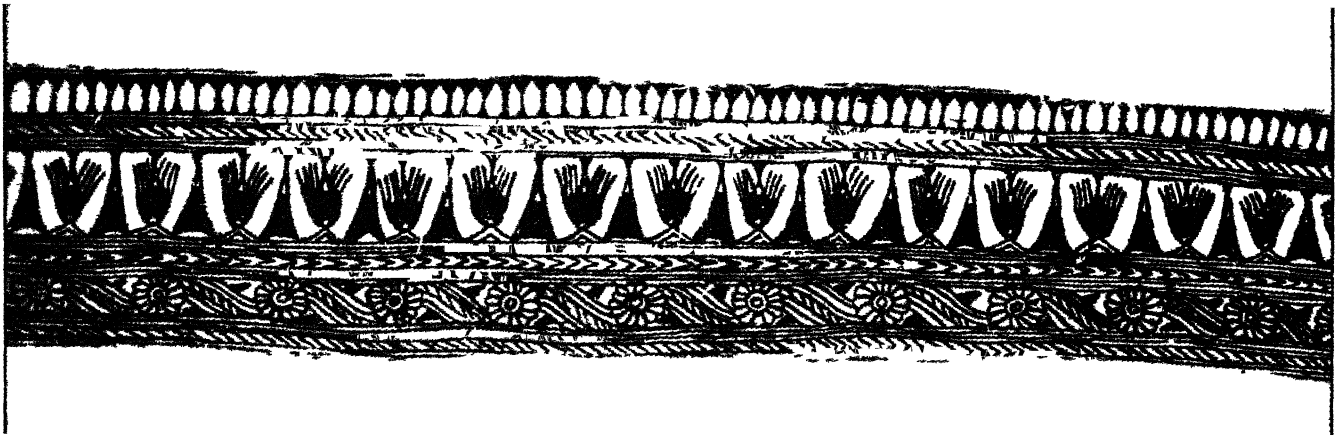
किये गये हें। बट–वृक्ष के नीचे दूल्हा–दुल्हैणी व कृष्ण – राधा अकित किय गये हे। यह अभिप्राय फलने–फूलने व पोषित होने के प्रतीक रूप मे अकित किया जाता है। भारतीय पुराख्यानो के आधार पर वट वृक्ष का सौभाग्य से सम्बन्ध है तभी सावित्री के साथ वट की पूजा भी होती है। ये अभिप्राय मात्र कथा–अकन ही नही करते वरन इनके पृष्ठ मे गूढ मनोवैज्ञानिक तथ्य भी दिये जाते है। वृक्ष स्वय प्रतीक है जीवन और पुनरूज्जीवन के।

बट वृक्ष अटल व बढते रहने वाला वृक्ष है। इसकी जडे बढकर पुन तने का रूप ले लेती हैं अत मगल व अटल सौभाग्य तथा हरे–भरे जीवन के भावना के तहत इस वृक्ष का अकन किया जाता हे। कितनी सहज पर कितनी सूक्ष्म अभिव्यक्ति है इन लोक–अभिप्रायो की जो मनोभाव हैं और हमारी सोच व परम्पराओ को दर्शाते हैं। वट–वृक्ष की इस परिभाषा को चरितार्थ करने की कल्पना से प्रेरित होकर ही सभवत यहा के अकित किये जाने वाले अधिकाशत ऐपणो का आधार वृक्ष ही है जैसे धूल्यर्घ की चौकी मे जड फागे (शाखाये) और टुक वृक्ष का ऊपरी भाग आदि बनाये जाते है। नीबू व कई लोग जनेऊ के ऐपण को भी वृक्ष रूप मे सयोजित करते है। देखने मे बिल्कुल ऐसा लगता है मानो वृक्ष को एक मूल साचे के रूप मे रखते हुये उसमे ऐपण को अकित कर दिया गया हो।

कमल के पुष्प की महत्ता सर्वाधिक रूप से इन लोक–चित्रो मे देखी जा सकती है। लगभग सभी ऐपण व लोक–चित्रो मे इस अभिप्राय का अकन हुआ है। जैसे लक्ष्मी अक शिव पीठ जनेऊ दुर्गा–चौकी सरस्वती चौकी धूल्यर्घ की चौकी ज्यूति गगा दशहरा पत्र आदि सभी मे कमल को भिन्न–भिन्न रूपो मे अकित किया गया है। कमल का अकन कुमाऊ लोक चित्रो मे यकायक ही नही आया वरन वैदिक युग के इतिहास से इस अभिप्राय की महत्ता को देखा जा सकता है। वासुदेवशरण अग्रवाल के अनुसार भारतीय कला धर्म और दर्शन मे कमल सबसे अधिक महत्व का प्रतीक है। यह अगाध जलो के ऊपर तैरते हुए प्राण का जीवन चिन्ह है। यह पुष्प सूर्योदय के समय अपनी पखुडिया खोलता है। सूर्य ब्रह्मा का प्रतीक माना गया है। अत कमल प्राण का वह रूप है जो मूल मे समसृष्टिगत प्राण या जीवन का आह्वान करता है। कमल का सकेत अनेक विशिष्ट अर्थों की ओर था। यह विष्णु की नाभि या केन्द्र से उदधृत होने वाले बलो का प्रतीक था। जिनसे प्राण का सम्वर्द्धन होता है। विष्णु के नाभि के कमल पर ब्रह्मा का विकास हुआ जो सृष्टिकर्ता है। कमल के पर्ण या पुर इन बेल को सृष्टि की योनि या गर्भाधान की शक्ति कहा है।

डॉ जगदीश गुप्त के अनुसार भारतीय कला का सबसे महान प्रतीक पद्म है। यह पद्म स्वय पृथ्वी का द्योतक है। पृथ्वी की आठ दिशाये इसके अष्टदल है। पृथ्वी की समृद्धि श्री इस पदम पर ही स्थित रहती है। पद्म हिन्दू, बौद्ध और जैन सभी मतो मे पवित्रता का प्रतीक माना जाता है कमल कीचड मे जन्म लेकर भी उससे ऊपर रहता है उस प्रज्ञावान मानव की भाति जो ससार मे रहकर भी इसके राग–द्वेष से ऊपर उठा रहता है। कमल पर जल की बूद नही ठहरती ज्ञानी का मन भी विकारो से निर्लिप्त रहता है। कमल मे एक–एक पत्ता जुडता जाता है। विवेक–शील नये श्रेयस्कर तत्वो को ग्रहण करता जाता है।

कमल–विष्णु के चार आयुधो मे से एक है तथा लक्ष्मी जी का आसन भी पद्म ही है। यही नही कमल को विभिन्न रूपो मे अलकरणात्मक अध्याय पर भी अकित किया गया है। इस प्रकार यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि कमल–अभिप्राय के पृष्ठ मे अकित मनोकथा दर्शन और आस्था का सम्मिश्रण करते है। यह सब घटक मानवीय प्रवृति व नैतिक मूल्यो की अभिव्यक्ति करते हैं।

अलकरणात्मक आकारो का अकन कुमाऊनी लोक–चित्रो की प्रमुख विशेषता है। मुख्य ऐपण यत्र या चित्र के चारो और सौदर्यात्मक अथवा कलात्मक आलेखन से उनको पूर्ण करना यहा की प्रमुख शैली है। इन्हे देखकर ऐसा आभास होता है कि मानो शरीर को आभूषणो से सजा दिया गया हो। विभिन्न प्रकार की फूल पत्ती से बनी बेले जैसे–कमल गुलाब चमेली आदि के अतिरिक्त अन्य प्रकार की ज्यामीतीय बेले एक गनेली (घोघे के आकार की बेल) व अन्य प्रकार की प्राकृतिक तथा ज्यामितीय आकारो को अलकरणात्मक शैली मे सयोया जाता है। देहली–ऐपण बरबूद ज्योति सेली आदि मे इन्हे देखा जा सकता है।

बिरुडाष्टमी पट मे अकित कुकुडी–माकुडी के पुष्पो का अकन मिलता हे। इस व्रत का कुकुडी–माकुडी का वृत भी कहा जाता ह इस वृत म कुकुडी–माकुडी के पौधे को लेकर उन्हे कपडा पहनाकर शिव पावती के प्रतीक रूप मे उनकी पूजा अर्चना की जाती है। कुकुडी–माकुडी वैसे ता पहाड मे उगने वाली एक प्रकार की बेल मे लगे पुष्पो को कहते हे परन्तु सभवत ये बेल आसानी से प्राप्त नही हाती इसलिए इनक स्थान पर प्राय धान झागुरा कौणी भुटटे आकाशबेल की जड व उगलका पेड लेकर उनसे कुकुडी–माकुडी बनाते ह। पावती को कुमाऊनी वेश–भूषा पिछौडा लहगा व शिवजी को कुमाऊनी पुरुष के वस्त्र पहनाकर उनके सिर पर मुकुट लगा दिये जाते है। ये गौरा–महेश्वर के प्रतीक रूप सतान की कामना मे अनुष्ठान द्वारा पूजे जाते है। इस सदर्भ मे जो लोक– गीत प्रचलित हे उनमे भी कुकुडी–माकुडी का उल्लेख मिलता है। इस गीत के बोल कुछ इस प्रकार से है –

'सातन समुद्रपार लाओ–कुकुडी–माकुडी का फूल।
गहरी छ गगा चीपली छ बारी–कसो कल्यूलो मैया कुकुडी को फूल।

उक्त अभिप्रायो का अकन इस व्रत के कथानुरूप देखने को मिलता है कथा अकन के अनुष्ठानिक स्वरूप को माध्यम बना कर मानव की ईश्वर से साक्षात्कार की मशा को अभिव्यक्त करती है ताकि वह उसकी मनोकामना पूर्ण करने मे सहायक हो।

हिमालय पर्वत का अकन हिमाचल नामक लोक–चित्र मे देखने को मिलता है। यह अकन प्राय घर के प्रवेश–द्वार के दोनो ओर बनाया जाता है। परन्तु ज्यूति अकन मे सर्वप्रथम व सबसे ऊपर की ओर भी हिमाचल को ही अकित किया जाता है। यह अकन हिमाचल को देवता–रूप मे सम्मान देने की दृष्टि से तो किया ही जाता है पर विवाह–सस्कार मे सर्वप्रथम हिमाचल को न्यौता देने ही दृष्टि से भी किया जाता है। शिव–पार्वती के विवाह को पौराणिक आख्यानो के अनुसार मगल व सृष्टि के प्रतीक रूप मे भी माना जाता है। पार्वती हिमालय की पुत्री थी इसीलिए सर्वप्रथम हिमाचल का अकन किया जाता है।

गोवर्धन पूजा से सबधित कथा का अकन गोवर्धन–पटट मे मिलता है। प्रकृति – उपासना का इसे महत्वपूर्ण उदाहरण माना जा सकता है। गोवर्धन–पर्वत का श्री कृष्ण द्वारा उगली पर उठाना व इन्द्र पर विजय–प्राप्त करने की कथा के सार के पीछे मुख्य भाव यही थे कि गोवर्धन पर्वत ही सुभिक्ष और वृष्टि करने वाला है न कि इन्द्र देवता की उपासना अत गोवर्धन पर्वत की पूजा करनी चाहिये। यही मनोविश्लेषण इस कथा–अकन के माध्यम से जन–जीवन मे सचारित होता है सामूहिक उपचेतना मे इन भावो की व्याप्ति समाज मे उक्त मूल्यो की स्थापना करती है। परिणामस्वरूप समष्टि आधार पर सस्कारो का पल्लवन होता है इन लोक–चित्रो के माध्यम से।

प्रकृति –उपासना मे वृक्ष पूजा व पर्वत पूजा के अतिरिक्त सूर्य–उपासना व चन्द्रमा की पूजा के उदाहरण भी मिलते है। सूर्य–दर्शन की चौकी शिशु जन्म के ग्यारह दिन पश्चात् नामकरण वाले दिन सूर्य की उपासना के तहत बनायी जाती है।
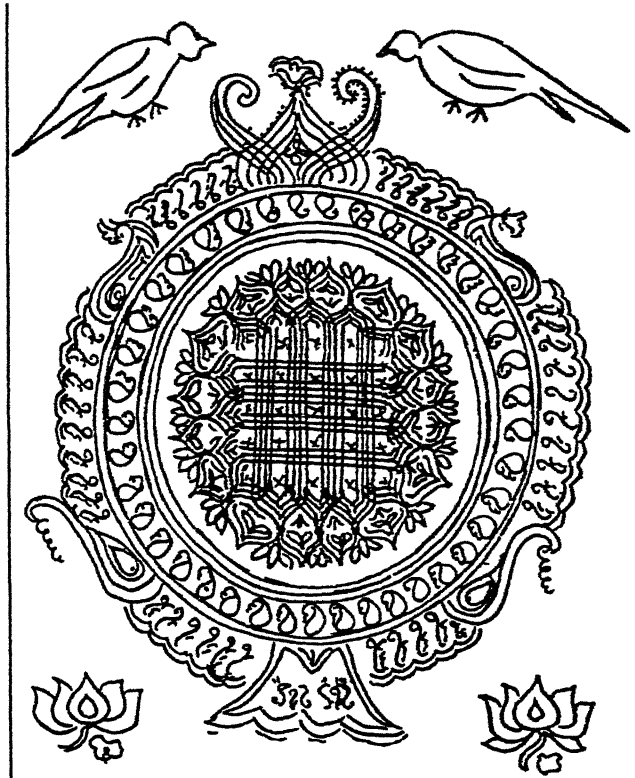
धूलिअर्घ की चौकी

पशु पक्षियो का अकन भी प्रतीकात्मक महत्व को आधार पर इन चित्रो मे दिखायी देता है। पक्षियो मे सर्वाधिक महत्व 'तोते' का दिया जाता है। विवाह से सबधित लोक–चित्रो मे इसको बहुत मान्यता दी गयी है। धूल्यर्घ की चौकी वर की चौकी ज्यूति अकन के साथ बनाये गये वट–वृक्ष के ऊपर व नीचे की ओर इनका अकन देखने को मिलता है। विवाह के निमत्रण का एक सस्कार गीत 'तोत' पर आधारित है। अत निमत्रण के प्रतीक रूप के साथ–साथ हरीभरी डाली व फलो से लदे वृक्षो के साथ जीवन की खुशहाली की अभिव्यजना के रूप मे भी यह अभिप्राय अकित किया जाता है।

कही–कही मोर का अकन खष्टी चौकी मे कार्तिकेय की पत्नी के वाहन के रूप मे देखने को मिलता है। पशुओ मे हाथी का अकन लक्ष्मी के साथ हुआ है। अन्य पशुओ मे भैंसे का यमराज के साथ गायो का कृष्ण–लीला व गोवर्धन पटट मे घोडो का वट सावित्री पटट मे बारात के दृश्य के साथ कथानुरूप देखने को मिलता है। वाहन रूप मे नदी बैल का शिव के साथ तथा चूहे का गणेश जी के साथ अकन किया गया है।

कुमाऊ मे धर्म के प्रति अगाध श्रद्धा रही है। प्राय लोक–चित्रो का अकन धार्मिक आस्थाओ से युक्त है। प्रतिदिन पूजा–करने व्रत–उपासना सस्कारो और पर्वो आदि से जुडे रहने के कारण यहा के लोगो के कर्म और पूजा पद्धति आदि अनुष्ठानो द्वारा सम्पन्न होते है और अनुष्ठान का सर्वाधिक महत्वपूर्ण हिस्सा ये लोक चित्र ही होते है। कही देवी–देवताओ की प्रतिमूर्ति तो कही प्रतीको को

कुमायू लोक कला अभिप्राय

निकल घुइया। इससे लाक मानस की यह मनोभावना स्पष्ट होती हे कि सुख–सम्पन्नता के लिये धन की देवी लक्ष्मी की पूजा–अचना कर उसे प्रसन्न किया जाता हे व घुइया अर्थात अलक्ष्मी का अनादर कर घर से बाहर धकेल दिया जाता है। जब यही भावना लोक धरातल पर व्याप्त होती है तो सभी की समान अनुभूति सामाजिक स्तर पर सामान्य जन को मानसिक रूप से एक दूसरे को जोडने मे सहायक होती है। सभी मिलजुल कर इन अनुभूतियो को एक मे बाटते हे। परिणामस्वरूप राष्ट्रीय चरित्र को बल मिलता है। लोककला मे अकित ये अभिप्राय अपने मे गूढ शक्ति समेटे होते है। इस को

अकित कर अपनी–अपनी मनोकामना पूर्ण करने की दृष्टि से पूजा करते है। देवी–देवताओ के अकन मे शेषशायी विष्णु पटट मे विष्णु लक्ष्मी मे ब्रह्मा का सृष्टि के प्रतीक रूप का अकन होता है। यह अकन विशेष रूप से एकादशी के दिन किया जाता है। पुराणो मे उल्लेख मिलता है कि भगवान विष्णु इस दिन से चार मास तक क्षीर–सागर मे शयन करते है तथा कार्तिक एकादशी अर्थात हरि प्रवोधिनी एकादशी के दिन निद्रात्याग करते हैं। इन चार मासो मे विवाह आदि कोई भी शुभ कार्य नही किया जाता है।

दीवाली पर्व पर विशेषकर लक्ष्मी जी की पूजा की जाती है। उनकी पूजा हेतु मूर्ति बनायी जाती है व कॉसे की थाली मे विचार मे लक्ष्मी जी का चिगालन किया जाता है दोनो तरफ हाथी बनाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त रसोई–घर की दीवार पर गेरू लीप कर विस्तार से भी लक्ष्मी–नारायण अकित किये जाते है क्योकि लक्ष्मी को धन–धान्य की देवी अर्थात अन्नपूर्णा माना जाता है। ज्यूति अकन मे तीन देवियो की आकृतिया बनायी जाती है उसमे से एक लक्ष्मी तथा अन्य सरस्वती व काली का अकन होता है।

हरबोधनी एकादशी के दिन कुमाऊ मे बूढी दीवाली नामक पर्व मनाया जाता है। इस दिन सूप मे अन्दर के हिस्से पर लक्ष्मी–नारायण अथवा' गणेश –सिद्धि की तथा बाहरी हिस्से पर घुइया' की आकृति बनायी जाती है। लक्ष्मी धन का तथा घुइया दरिद्रता के प्रतीक रूप मे अकित किये जाते हैं। सूप मे बनी घुइया की आकृति को पीटते हुये यह उक्ति बोली जाती है आओ लक्ष्मी बैठो नारायण

नकारा नही जा सकता। देवी–देवीताओ के अन्य रूपो मे 'गणेश' की आकृति भी महत्पूर्ण होती है। किसी भी कार्य को प्रारभ करने मे 'गणपति' की आराधना सर्वप्रथम करने की मान्यता प्राप्त है। इसी नाते कहा भी जाता है कि कार्य का श्री गणेश करे' अर्थात प्रारम्भ करे। गणपति बुद्धि–ज्ञान और कार्य को सफल करने के प्रतीक रूप मे पूजे जाते है। इसीलिये हर शुभ कार्य मे गणेश जी की आकृति अकित की जाती है ताकि कार्य भली–भाति पूर्ण हो जाय। ज्यूति अकन गगा–दशहरा पत्र बूढी दीवाली के सूप मे बिरूडाष्टमी पट्ट वट–सावित्री पट्ट कृष्ण जन्माष्टमी पट्ट दुर्गास्थापना आदि सभी मे इसका अकन देखने को मिलता है।

कुमाऊ मे दुर्गा–पूजा को बहुत महत्व दिया जाता है। दुर्गाअष्टमी पर दुर्गा थापा' अकित किया जाता है। इस पट्ट मे कुमाऊ के लोक देवी–देवताओ जैसे आदि के साथ बर्मी उजियारी देवी भोलानाथ गोलानाथ (भैरव) गणेश–सिद्धि लक्ष्मी–पत्र चन्द्रमा सूर्य सुसारिंग नौमुण्डा देवी सिहवाहिनी देवी भैरव यत्र व नव दुर्गा आदि की आकृतिया बनी होती है। दुर्गा को शक्ति का पर्याय कहा जाता है। बुराई व अन्याय पर विजय प्राप्त करने की शक्ति देने वाली दुर्गा से शक्ति व सामर्थ्य के साथ महिलाये अपने अटल सुहाग की कामना की दृष्टि से पूजा करती हैं।

देवी–पूजा हेतु नवदुर्गा के प्रतीक रूप मे नैव–स्वास्त नामक ऐपण अकित करने का विशेष प्रयन्त है। इन स्वास्ताओ को कुमाऊ मे खोडिया कहा जाता है। कृष्ण–जन्माष्टमी के पर्व पर कृष्ण जन्माष्टमी का पट्ट अकित किया जाता है। भारतीय पुराख्यानो के

अनुसार यह अवधारणा मान्य है कि जब–जब धर्म की हानि होती हे इश्वर एक नया रूप धर कर पृथ्वी पर जन कल्याण की भावना स अवतरित होते है। इसी क्रम मे कृष्ण का जन्म महान पर्व का रूप लकर उभरा/कसरूपी बुराइयो व अत्याचारो का विनाश करन सबधी मनोकामना करते हुये लोग कृष्ण की धूम–धाम से पूजा करते हे। उनके जन्म की कथाओ को अकित करत ह। क्योकि उनका जन्म हुआ ही लोक कल्याण की भावना से था। समस्त कथा लाक–मानस की भावनाओ से युक्त अभिप्राया को अकित करती ह।

शिव–पार्वती की पूजा कुमाऊ मे अत्यन्त श्रद्धा से की जाती है। हरेला पर्व पर विराट विश्व के माता–पिता के रूप मे प्राण सृष्टि के प्रतीक रूप मे इनकी अर्चना की जाती है। शिव की परिवार सहित मूर्ति बनाकर पूजा की जाती है। पार्थिव पूजा सन्तति व धन–सम्पत्ति की कामना से की जाती है जिसमे शिव–लिग बनाकर उनकी पूजा की जाती हे। शिव का लिग विग्रह प्राण सृष्टि का रूप हे और उमा महेश्वर मैथुनी सृष्टि से जिससे स्कन्द रूप कुमार जन्म लेता है। अर्द्धनारीश्वर का अभिप्राय मिथुन का ही प्रतीक रूप है।

शिव की मत्रो के आधार पर पूजा–हेतु शिव–पीठ अकित की जाती है। कुमाऊ मे यह आठ–बूद बारह–बूद आदि के मापदण्ड पर अकित की जाती है।

इस प्रकार मगल व सुरक्षा की भावना से किये जाने वाले अनुष्ठान या अकन प्रागैतिहासिक काल से अभी तक भारतवासी बनाते आ रहे है। इनमे अकित अभिप्राय शैली व निरूपण मे भिन्न होते हुये भी उद्देश्य के आधार पर समानता लिये होते है जिससे भारत–भूमि की सामूहिक लोक–भावना का ऐक्य स्पष्ट दिखायी देता है।

धार्मिक प्रतीको से सबधित अभिप्राय कुमाऊनी लोक जीवन की आस्था को उजागर करने मे सहायक होते है। कुमाऊ मे पूजा–अर्चना के समय शख घट (घटी) धुपैड (दीपक) आरती (आरती की थाली) और कलश आदि को प्रधानता दी जाती है। यह सभी अभिप्राय यहा के लोकचित्रो मे देखे जा सकते है। सूर्य दर्शन की चौकी धूलि अर्ध भी चौकी व पिछौड आदि मे इनका अकन मिलता है। कलश (गड्डुआ) की आकृति को विवाहोत्सव पर शुभ व शकुन की भावना से निहित किया जाता है। पिथौरागढ मे विवाह के अवसर पर द्वार लेखन मे कलश को प्रमुख स्थान दिया गया है।

कलश एक प्रकार से पूर्णघट का प्रतीक स्वरूप है। जिसे फूल–पत्तियो से सजाया जाता है। यह सुख सम्पत्ति व जीवन की पूर्णता का प्रतीक है। घडे मे भरा जल जीवन या प्राणरूपी रस के समान होता है। ऋग्वेद मे भी पूर्णघट का उल्लेख मिलता है जिसमे अमृत भरा होता है। इसे ब्रह्मा विष्णु व महेश का प्रतीक रूप भी माना जाता है जिसके पृष्ठ मे सृष्टि विकास और मगल की भावना निहित है।

'स्वस्तिक का अकन हर शुभ कार्य मे किया जाता है। भारतीय कला मे उल्लिखित वासुदेव शरण अग्रवाल के कथनानुसार यह स्वस्तिक चार दिशाओ मे व्याप्त विश्व–मण्डल के चतुर्भज रूप का प्रतीक सूय से सबधित हे यह मण्डल प्राची दक्षिण प्रतीची और उदीची दिशाओ स बना हुआ ह। सूय उसका मध्य ह। इन दिशाओ के विकास स स्वस्तिक बनता ह यह मानव और विश्व का सर्वोत्तम मागलिक चिन्ह हे। चार दिशाओ की मान्यता या चार लोकपालो की पूजा के रूप म स्वस्तिक की पूजा का विकास हुआ ह। ऋग्वेद म पूव पश्चिम उत्तर दक्षिण आदि चार दिशाओ का उल्लेख मिलता ह अग्नि इन्द्र वरुण आर साम य चार दवता ह इन चार दिशाओ क अधिपति थ किन्तु लाक कम की मान्यता म परिवतन क साथ चार दिशाओ के चार लाकपाल माने जाने लग। व ही चतुभुज हाराजिक देव कहलाए। स्वस्तिक को चतुष्पाद ब्रह्मा का भी उपलक्षण कह सकते ह। अथात यह चतुर्भुज ब्रह्मा का वह रूप हे जो विश्व का प्रजापति ओर विधान करने वाला है। स्वस्तिक की यह लोक मान्यता मगल भावना स उदभूत हो लाक अभिप्राय के रूप म लाक चित्रो म स्वत ही उभर कर आ गयी।

अन्य अभिप्रायो मे त्रिभुज का अकन महत्वपूण रूप से लिया जा सकता है। त्रिभुज का अकन कही पवत तो कही शिव शक्ति के प्रतीक के रूप मे हुआ है। लक्ष्मी यत्र बिन्दु शिव–यत्र आदि मे इसका प्रयोग देखा जा सकता हे। बिन्दु का ब्रह्माण्ड के प्रतीक रूप मे तथा अलकरणात्मक दृष्टि से भी अकित किया गया हे। बिन्दुओ का प्रयोग यहा शिव–पीठ जनेऊ आदि एपणो व बूँद–बूँद आदि के अकन की नीव के रूप मे हे। रखाये इन लोक चित्रो की प्रमुख आधार है। देहली सीढी व दीवारो पर तथा यज्ञ–वेदी पर गेरू लीप पर विस्तार से डाले जाने वाले वसुधारे तो रेखात्मक रूप मे ही अकित किये जाते है।

वास्तुगत आकारो जैसे महल मदिर घर आदि का अकन इन

स्यो कुमायू लोक कला अभिप्राय

घुइयाँ कुमायू लोक कला अभिप्राय

चित्रो मे देखा जा सकता है तथा चित्रो की पृष्ठभूमि मे कही देवी–देवताओ की आकृति के चारो ओर मदिर के आकारो का अकन किया जाता है। ज्यूति मे अकित जीवन मातृकाओ के अकन के चारो ओर खिडकी को बेल रूप मे अकित किया गया है। जिससे यहा की महिलाए छाजी बेल कहती है।

परिधान अथवा वेशभूषा भी लोकाभिप्रायो का महत्वपूर्ण अग होते है। विशेष रूप से कुमाऊ की सस्कृति क`परिचायक रूप मे परिधान का अलग ही महत्व है। कुमाऊनी लोक चित्रो मे अकित देवियो को कुमाऊनी महिलाओ की वेशभूषा के रूप मे भी प्राय सुसज्जित किया गया है। लहगा पिछौडा सर पर मुकुट नाक मे बडी सी नथ कानो मे झुमकिया माथे पर बिन्दी आदि को ज्यूति दुर्गाथापा पट्ट आदि मे अकित देवियो की आकृतियो को पहने हुये देखा जा सकता है। विवाहोत्सव पर बनाये जाने वाले समधी–समधन को भी कुमाऊनी वेशभूषा मे ही सुसज्जित किया जाता है। पुरुष आकृति को धोती कुर्ता आदि मे देखा जा सकता है।

लोक भ्रम व विश्वास भी यहा की कला व पूजा मे अभिप्राय रूप मे अकित हो जाते है। जैसे भोलानाथ आदि ग्राम देवता भूत के रूप मे न चिपट जाये इसलिए उसकी मूर्ति या आकृति बनाकर पूजा की जाती है। दुर्गा थापा मे भोलानाथ नामक देवता का अकन किया जाता है। जागर भी ग्राम देवताओ या कुल देवी देवताओ की उपासना व उसमे आस्था का ही परिणाम है।

मकर सक्राति के दिन धुधुतिया फूल नामक पर्व लोक विश्वासो पर आधारित है। ऑटे और गुड के सम्मिश्रण से विभिन्न आकारो के पकवान बनाकर उन्हे माला मे गूथ कर प्रात कौवे को खिलाते है। फिर उसस जिस वस्तु की कामना हो उससे मॉगी जाती है। उदाहरणार्थ कुमारी कन्याये पकवान के इन फूला को कोवे को देकर कहती है ले कोवा फूलो मै कन दिये भल दुल्हो अथात ऐ कोवे तू फल खा और इसके बदले मे मुझे अच्छा दुल्हा दे। ऐसे विश्वासो से लोक पर्व विरूडाष्टमी वट सावित्री पार्थिव पूजा आदि आते है। हरैला और फूदेई आदि भी कुमाऊ के महत्वपूर्ण लोक पर्वों मे आते हे दोनो ही ण्व सुख–समृद्धि व सभ्यता आदि की कामना पर आधारित है। हदैला कक सक्रान्ति को मनाया जाने वाला पर्व है। यह पर्व कृषि से सबधित है तथा शिव–पार्वती की आराधना इस पव पर विशेष रूप से की जाती है। मिटटी से बनाये शिव–पार्वती ओर उनके परिवार से युक्त मूर्तियो को डिकारे कहा जाता है। पूजा के निर्मित सृष्टि के प्रतीक रूप मे इन डिकारो की पूजा की जाती है और मक्का गहत जौ लाई आदि मिटटी मे बोकर उनकी पूजा की जाती है। ईश्वर से प्रार्थना की जाती है कि हमारे फसलो की रक्षा करना व सुख समृद्धि बनाये रखना।

नव सवत्सर के आगमन का पर्व फूलदेई है। प्रतिवर्ष चैत्र शुक्ल की प्रतिपदा को सृष्टि का आरभ हुआ मानते है। कुमाऊ –गढवाल मे इस दिन को फूल सक्रान्ति या फूल देवी के नाम से मनाया जाता है। देई का अर्थ यहा देहली से होता है। देहली पूजना हमारी सस्कृति का महत्वपूर्ण अग माना जाता है। यह घर मे प्रवेश का प्रारम्भिक स्थल होता है। देहली ऐपण अकित कर देहली पूजते हैं कि घर मे नव–वर्ष खुशहाली के रूप मे प्रवेश करे। इसी कामना से इस उत्सव को मनाया जाता है। देहली पर पुष्प चढाते समय यह गीत गाया जाता है फूलदेई छम्मादेई भर भखार दैणी द्वार अर्थात फूलदेई क्षमाशील देहली भडार भर जाय द्वार दक्षिण (कृपाल) हो।

लोक मे प्रचलित विशिष्ट नाम भी यहा की लोक कला के अभिप्रायो मे सम्मिलित हो जाते है। जेसे अलक्ष्मी के लिये प्रयुक्त घुइया' पर भिगोये जाने वाले पाच – सात प्रकार के अनाज बिरुडे कहे जाते हैं। दुर्गा पट्ट को दुर्गाथापा स्वस्तिक को खोडिया लोक आलेखनो के लिये प्रयुक्त शब्द ऐपण है। कलश के लिये गुड्डुआ जीवन मातृकाओ के लिये ज्यूँति बसुधरो को धडे भी कहा जाता है। इनके अतिरिक्त मुवाली जनेऊ जनेऊ–छापरी वर–बूद हिमाचल लक्ष्मी–पौ कुकुडी–माकुडी धूल्यर्घ की चौक नीबू बिखोती चैतुआ नाता–बधन आदि यहा के स्थानीय नाम है। जो भिन्न–भिन्न आलेखनो के लिये प्रयुक्त किये जाते हैं। इस प्रकार कुमाउनी लोक कला मे अभिव्यक्त अभिप्रायो के सदर्भ मे इतना अवश्य कहा जाता है कि ईश्वर मे आशा सुरक्षा की भावना सामाजिक रीति–रिवाज सस्कृति परम्परा जाति व धर्म लोक साहित्य भाषा आदि का प्राकृतिक पर्यावरण आदि के सपुजन से इनका जन्म हुआ है। कुमाऊ विशेष के लोक मानस का विश्लेषण इनसे सहज सभव हो पाता है। सामाजिक और राष्ट्रीय धरातल पर विश्वास अथवा आस्थाये मात्र कलाभिरूप नही है वरन देश की एकता व विकास के मूलभूत अग भी है।

चित्र साभार – डॉ कष्णा बैराठी (लेखिका)

सयोजन (नेचर) 2000 तैल रग 30 x 40 अवधेश मिश्र

घुइयॉ कुमायू लोक कला अभिप्राय

चित्रो मे देखा जा सकता है तथा चित्रो की पृष्ठभूमि मे कही देवी–देवताओ की आकृति के चारो ओर मदिर के आकारो का अकन किया जाता है। ज्यूति मे अकित जीवन मातृकाओ के अकन के चारो ओर खिडकी को बेल रूप मे अकित किया गया है। जिससे यहा की महिलाए छाजी बेल कहती है।

परिधान अथवा वेशभूषा भी लोकाभिप्रायो का महत्वपूर्ण अग होते है। विशेष रूप से कुमाऊ की सस्कृति क परिचायक रुप मे परिधान का अलग ही महत्व है। कुमाऊनी लोक चित्रो मे अकित देवियो को कुमाऊनी महिलाओ की वेशभूषा के रूप मे भी प्राय सुसज्जित किया गया है। लहगा पिछौडा सर पर मुकुट नाक मे बडी सी नथ कानो मे झुमकिया माथे पर बिन्दी आदि को ज्यूति दुर्गाथापा पट्ट आदि मे अकित देवियो की आकृतियो को पहने हुये देखा जा सकता है। विवाहोत्सव पर बनाये जाने वाले समधी–समधन को भी कुमाऊनी वेशभूषा मे ही सुसज्जित किया जाता है। पुरुष आकृति को धोती कुर्ता आदि मे देखा जा सकता है।

लोक भ्रम व विश्वास भी यहा की कला व पूजा मे अभिप्राय रूप मे अकित हो जाते है। जैसे भोलानाथ आदि ग्राम देवता भूत के रूप मे न चिपट जाये इसलिए उसकी मूर्ति या आकृति बनाकर पूजा की जाती है। दुर्गा थापा मे भोलानाथ नामक देवता का अकन किया जाता है। जागर' भी ग्राम देवताओ या कुल देवी देवताओ की उपासना व उसमे आस्था का ही परिणाम है।

मकर सक्राति के दिन धुधुतिया फूल नामक पर्व लोक विश्वासो पर आधारित है। आटे और गुड के सम्मिश्रण से विभिन्न आकारो के पकवान बनाकर उन्हे माला मे गूथ कर प्रात कौवे को खिलाते है। फिर उससे जिस वस्तु की कामना हो उससे मॉगी जाती है। उदाहरणाथ कुमारी कन्याये पकवान के इन फूलो को कौवे को देकर कहती है ले कौवा फूलो मै कन दिये भल दुल्हो अर्थात ऐ कौवे तू फल खा और इसक बदले मे मुझे अच्छा दुल्हा दे। ऐसे विश्वासो से लोक पर्व विरूडाष्टमी वट सावित्री पार्थिव पूजा आदि आते है। हरैला और फूदेई आदि भी कुमाऊ के महत्वपूर्ण लोक पर्वों मे आते हे दोनो ही पर्व सुख–समृद्धि व सभ्यता आदि की कामना पर आधारित है। हदैला कर्क सक्रान्ति को मनाया जाने वाला पर्व है। यह पव कृषि से सबधित है तथा शिव–पार्वती की आराधना इस पर्व पर विशेष रूप से की जाती है। मिटटी से बनाये शिव–पार्वती ओर उनके परिवार से युक्त मूर्तियो को डिकारे कहा जाता है। पूजा के निर्मित सृष्टि के प्रतीक रूप मे इन डिकारो की पूजा की जाती है और मक्का गहत जौ लाई आदि मिटटी मे बोकर उनकी पूजा की जाती है। ईश्वर से प्रार्थना की जाती है कि हमारे फसलो की रक्षा करना व सुख समृद्धि बनाये रखना।

नव सवत्सर के आगमन का पर्व फूलदेई है। प्रतिवर्ष चैत्र शुक्ल की प्रतिपदा को सृष्टि का आरभ हुआ मानते है। कुमाऊ –गढवाल मे इस दिन को फूल सक्रान्ति या फूल देवी के नाम से मनाया जाता है। देई का अर्थ यहा देहली से होता है। देहली पूजना हमारी सस्कृति का महत्वपूर्ण अग माना जाता है। यह घर मे प्रवेश का प्रारम्भिक स्थल होता है। देहली ऐपण अकित कर देहली पूजते हैं कि घर मे नव–वर्ष खुशहाली के रूप मे प्रवेश करे। इसी कामना से इस उत्सव को मनाया जाता है। देहली पर पुष्प चढाते समय यह गीत गाया जाता है फूलदेई छम्मादेई भर भखार दैणी द्वार अर्थात फूलदेई क्षमाशील देहली भडार भर जाय द्वार दक्षिण (कृपाल) हो।

लोक मे प्रचलित विशिष्ट नाम भी यहा की लोक कला के अभिप्रायो मे सम्मिलित हो जाते है। जेसे अलक्ष्मी के लिये प्रयुक्त घुइया' पर भिगोये जाने वाले पाच – सात प्रकार के अनाज बिरुडे कहे जाते हैं। दुर्गा पट्ट को दुर्गाथापा स्वस्तिक को खोडिया लोक आलेखनो के लिये प्रयुक्त शब्द ऐपण है। कलश के लिये गुडुआ जीवन मातृकाओ के लिये ज्यूॅति बसुधरो को धडे भी कहा जाता है। इनके अतिरिक्त मुवाली जनेऊ जनेऊ–छापरी वर–बूद हिमाचल लक्ष्मी–पौ कुकुडी–माकुडी धूल्यर्घ की चौक नीबू, बिखोती चैतुआ नाता–बधन आदि यहा के स्थानीय नाम हैं। जो भिन्न–भिन्न आलेखनो के लिये प्रयुक्त किये जाते है। इस प्रकार कुमाउनी लोक कला मे अभिव्यक्त अभिप्रायो के सदर्भ मे इतना अवश्य कहा जाता है कि ईश्वर मे आशा सुरक्षा की भावना सामाजिक रीति–रिवाज सस्कृति परम्परा जाति व धर्म लोक साहित्य भाषा आदि का प्राकृतिक पर्यावरण आदि के सपुजन से इनका जन्म हुआ है। कुमाऊ विशेष के लोक मानस का विश्लेषण इनसे सहज सभव हो पाता है। सामाजिक और राष्ट्रीय धरातल पर विश्वास अथवा आस्थाये मात्र कलाभिरूप नही हैं वरन देश की एकता व विकास के मूलभूत अग भी है।

चित्र साभार – डॉ कष्णा बैराठी (लेखिका)

सयोजन (नेचर) 2000 तेल रग 30 x 40 अवधेश मिश्र

लखनऊ के सैरां चित्रकार

अवधेश मिश्र *
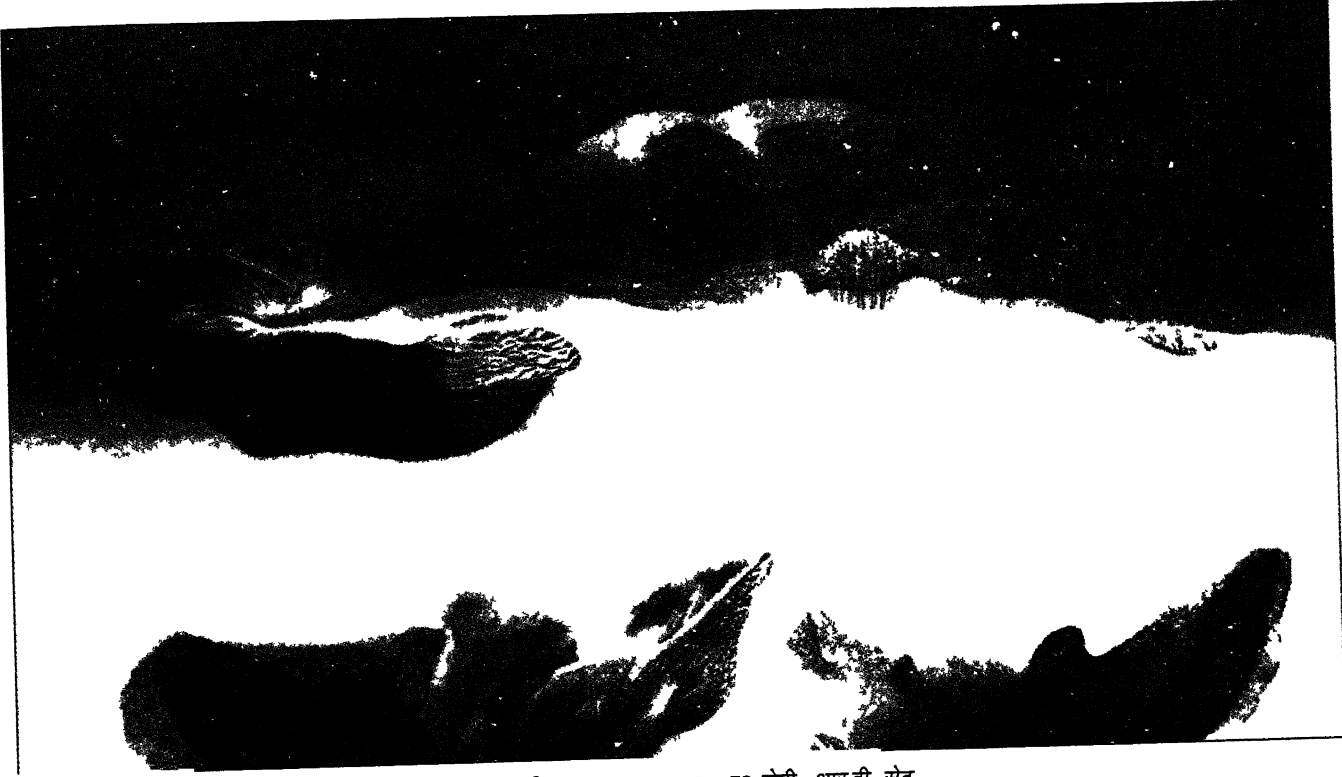
स्वप्न अभियास जल रग 90 x 70 सेमी आर बी सेठ

समकालीन कला के राष्ट्रीय/अतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य मे लखनऊ की भूमिका सदैव उल्लेखनीय रही है। इसका कारण यहाँ की सशक्त कलात्मक पृष्ठभूमि है जो इन्डो–इस्लामिक इमारतो मिटटी के खिलौनो और लोक कलाओ मे स्पष्ट रूप से दृष्टव्य है। लखनऊ के नवाबो के कला–प्रेम को भी आज के कलात्मक समृद्धि से जोडा जा सकता है। उनके पहनावो प्रयुक्त सामग्रियो आदि के मोटिफ अति सूक्ष्म धैर्यपूर्ण कार्य तथा छवि चित्रण करवाने का शोक जो चौक इलाके मे पिक्चर गैलरी मे सग्रहीत चित्रो मे देखा जा सकता है आदि कलात्मक परिवेश के उल्लेखनीय उदाहरण है।

नवाबो के शहर लखनऊ मे उन्नीसवी सदी के अत तक यदि शिल्पकारिता को कला से अलग करे तो दृश्य कला मे कोई उल्लेखनीय कार्य होने का उदाहरण नही प्राप्त होता फिर भी अपभ्रश/कम्पनी शैली का प्रमुख केन्द्र अवध होने के कारण रेजीडेसी म्यूजियम पुरातत्व सगठन या व्यक्तिगत सग्रहो के उदाहरणो से कमोवेश कुछ काय होने की पुष्टि होती हे। बीसवी सदी क आरभ मे कला/शिल्प के प्रति जागरूकता बढी और सदी के दूसरे दशक मे कला विद्यालय (सम्प्रति–कला एव शिल्प महाविद्यालय लखनऊ) की स्थापना होने से लखनऊ महत्वपूर्ण हो गया। यहा से प्रशिक्षित कलाकार देश–विदेश मे स्थापित हो अपनी रचनाधर्मिता व कृतियो मे लखनऊ की विशिष्ट छाप के कारण दृश्य कला क्षेत्र मे लखनऊ को प्रकाश मे लाए।

हालाकि लखनऊ मे विभिन्न धाराओ मे कला–विकास हुआ और आज तक उन धाराओ का प्रतिनिधित्व हाता आ रहा है पर कला विद्यालय के पहले प्रधानाचार्य नेथेनियल हड रॉयल एकेडमी आफ फाइन आर्ट लदन से प्रशिक्षित ललित मोहन सेन तथा कलाचार्य बिरेश्वर सेन द्वारा पोषित अकादमिक शैली की उपधारा के रूप म भू–दृश्य चित्रकारी विकसित हुई जिसका लखनऊ की चित्रकला मे विशेष महत्व है। आरभिक दौर मे पश्चिमी कला

* कलाकार/कला समीक्षक स्टूडियो – 12/179 इदिरा नगर लखनऊ – 226016

ग्राम्य दृश्य – लिनोकट ललित मोहन सेन
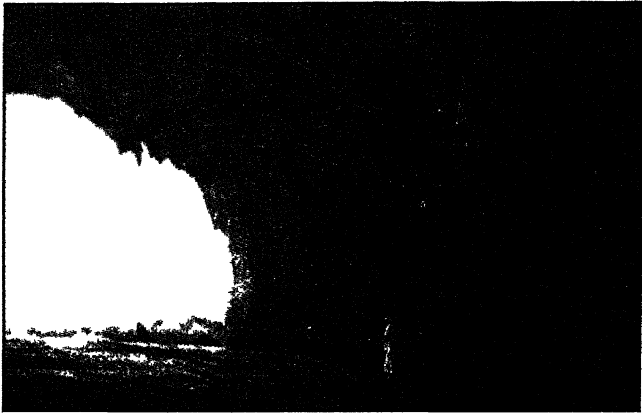
माउण्टेन – जल रग 6 x 9 सेमी बीरेश्वर सेन

पेटिग – जल रग 38 x 28 सेमी एच एल मेढ

प्रशिक्षण स्वरूप के अनुरूप ही अकादमिक शैली मे छवि चित्रण (पोर्टेट) मॉडल स्टडी ओर लैड–स्केप पेटिग की शुरुआत हुई पर समकालीन कला के प्रभाव मे आने से सृजनात्मक पक्ष मजबूत हुआ और प्रयोग भी होने लगे।

चूकि कला अध्ययन के प्रायोगिक पक्ष मे निसग स सामजस्य आवश्यक होता है और उसका प्रत्यक्ष/परोक्ष तथा दूरगामी परिणाम स्वाभाविक है अत प्रकृति क रहस्यो वर्णाकारो स्पदनशील परिवर्तन व प्रतिक्रियाओ का गहन अध्ययन कला मे सजीवता लाने के लिए अति आवश्यक होता है। इस कारण प्राथमिक दोर का स्वाभाविक/यथार्थ अध्ययन अपने निजत्व सृजनात्मकता व अनुभवो के कारण अमूर्तनोन्मुख व प्रयोगात्मक अधिक होने लगे। आज समकालीन कला जगत मे हो रहे प्रतिनिधित्व मे अधिसख्य भू–दृश्य चित्रकारी से जुडे कलाकारो ने ही अपनी रुचि के अनुसार विभिन्न रूपो मे अपनी पहचान बनायी है।

लखनऊ मे भू–दृश्य चित्रकारी की नीव दूसरे दशक मे ही पड चुकी थी और इस धारा को आगे बढाने के लिए कलाकार आगे आते गए। इसके सबसे बडे केन्द्र के रूप मे कला महाविद्यालय तो था ही इसके अतिरिक्त हजरतगज और पुराने लखनऊ के एक–दो कलाकारो का नाम इस सबध मे लिया जाता है। शमी उज्जमा एक नाम उल्लेखनीय है जिन्हे कला का कोई औपचारिक प्रशिक्षण नही मिला था पर जब भी लैड–स्केप पेटिग का जिक्र किया जाय तो सर्वप्रथम बिरेश्वर सेन का नाम उल्लेख करना समीचीन होगा। आज लखनऊ के कला परिदृश्य को अतर्राष्ट्रीय परिवेश से जोडने का मुख्य श्रेय जिन कलाकारो को जाता है वे विरेश्वर सेन का नाम अपने साथ जोडने मे गर्व का अनुभव करते है।

हालाकि ललित मोहन सेन ने छवि चित्रण के अतिरिक्त दृश्य चित्रकारी मे काफी रुचि दिखायी। उनके उपलब्ध चित्रो मे वर्ण–योजना तूलिका–सघात परिप्रेक्ष्य आदि का परिपक्व प्रयोग उनकी दक्षता और एक पैनी दृष्टि को प्रमाणित करता है पर पाश्चात्य प्रभाव उन पर अधिक हे। सेन साहब ने ग्लोबलाइजेशन को महत्व दिया है और कला प्रशिक्षण का एक स्तर निर्धारित करने मे रुचि दिखायी जिसका सामाजिक प्रभाव समकालीन कला मे दृष्टव्य है। छाया–प्रकाश का प्रभाव सतुलन व छोटे–छोटे स्ट्रोक मे कार्य करने की प्रवृत्ति लिनोकट से लेकर लैडस्केप तक थी।

एल एम सेन के उपरान्त विरेश्वर सेन का नाम इस धारा के प्रणेता के रूप मे उभर कर आता है और लघु चित्रण के माध्यम से दृश्य चित्रकारी को जो महत्व दिलाया वह अविस्मरणीय है। सेन जी ने प्रकृति के विस्तार व मौलिकता को कागज के छोटे से फ्रेम मे कैद किया। विजिटिग कार्ड और पोस्टकार्ड आकार मे चित्रण करते हुए उसके डिटेलिग का पूरा ध्यान रखा। स्वाभाविक चित्रण करते हुए परिप्रेक्ष्य अग्रभूमि आदि को समुचित महत्व दिया। प्राकृतिक दृश्यो मे मानवाकृतियो का प्रयोग भी इस तरह किया है कि सयोजन मे आकारो के सामजस्य मे कोई प्रतिकूल प्रभाव न उत्पन्न हो। माध्यम के रूप मे जलरग प्रमुख माध्यम रहा पर कही–कही अपारदर्शी रगो का प्रयोग भी हुआ है। राज्य ललित कला अकादमी उ प्र राष्ट्रीय

अनुनिक कला संग्रहालय नइ दिल्ली तथा दश के अनक संग्रहालय न इनक के चित्र उपलब्ध ह।

कुछ चित्रकार इस तरह भी इस धारा का प्रतिनिधित्व किए जा स्वतंत्र रूप न दृश्य चित्रो का महत्व नही दिए पर अपन सयोजन म भरपूर प्रयोग किया। इनमे हरिहर लाल मढ का नाम प्रमुख हे। मेढ जी न प्रय सयोजन म परिप्रक्ष्य दर्शाने क लिए दृश्यो का प्रयोग किया हालाकि स्वतत्र रूप म किए गए दृश्य चित्रो का अपना महत्व हे इनम पहाडी दृश्यो बादलो आदि के ट्रीटमेट से इसक गहन अध्ययन का अनुमान लगाया जा सकता है। कही–कही बादलो क पीछ (बदली म) से सूय क प्रकाश का एक वक्र रेखा जेसा प्रभाव अति आकषण प्रदान करता ह।

मघदूत शृखला मे मेढ जी ने यक्ष/दक्षिणी के साथ सयोजन मे दृश्य व बादलो का भरपूर अकन किया है। जलरग (वाश) मे रची गइ इस शृखला म डिटेल–फिनिशिग/अति यथार्थता दर्शायी गइ हे। स्वतत्र दृश्य चित्रो मे भी जल माध्यम की मोलिकता का अति सतुलित व धेयपूर्ण किए गए कार्यों की श्रेणी मे रख सकते है।

हरिहर लाल मेढ आदि कलाकार उस विशिष्ट श्रेणी के कलाकार थ जो शास्त्रीयता के अतर्गत किए गए कार्यों को महत्व देते थे पर मदन लाल नागर लखनऊ के उस महत्वपूर्ण श्रेणी के कलाकारो के लिए पायोनियर थे जो आज समकालीन कला जगत मे अहम स्थान रखते हे। मदन जी एक सिटी पेटर के रूप मे जाने गए ओर लखनऊ के ऐसे चेहरे को प्रस्तुत किया जो चक्करदार गलियो मेहराबो मदिरो इन्डो–इस्लामिक मेहराबो व इमारतो के मिले–जुले प्रभाव के साथ दृष्टव्य है। नागर जी ने कला क्षेत्र मे एक क्रान्ति लायी जिसे बिष्ट ने प्रतिनिधि के रूप मे आगे बढाया पर इन दानो के निजत्व व्यक्तित्व व कृतित्व मे काफी अतर था। नागर जी के लखनऊ चित्राकन मे अमूर्तनोन्मुखता विद्यमान थी सृजनशीलता थी पर प्रयोग प्रो बिष्ट जैसा नही था। नागर जी घुमावदार लोहे की चादरा के आकार की सकरी दीवारो इमारतो की प्राचीनता रहस्यमयता और पतन होते नवाबी साम्राज्य पर कटाक्ष जैसी वैचारिक पेटिग की। राष्ट्रीय आधुनिक कला सग्रहालय नई दिल्ली व राज्य ललित कला अकादमी उ प्र मे महत्वपूर्ण चित्र सग्रहीत हे।

नागर जी के प्रारभिक दौर मे किए गए कार्य जो छोटे–छोटे पैलेट नाइफ के स्ट्रोक द्वारा बनाए गए है अध्ययन की दृष्टि से अति महत्वपूर्ण है। इनमे अकादमिक शैली के पुराने और प्रयोगात्मक स्वरूप मे अतर देखा जा सकता है।

नित्यानद महापात्र जी ने भू– दृश्य चित्रकारी (सैरा चित्र) के उस शैली को आगे बढाया जो ललित मोहन सन विरेश्वर सेन द्वारा पोषित थी पर महापात्र जी की शैली मे काफी प्रभाव उडीसा और बगाल के (रमेन चक्रवर्ती मुकुल डे ओ सी गागुली एम डी टाली तथा गगनेन्द्रनाथ ठाकुर) कलाकारो/स्कूल का देखा जा सकता है। इसमे बहाव और पारदर्शिता तो उल्लखनीय है लेकिन वर्ण–विधान सदैव धुधला और वाश शैली से प्रभावित रहा। महापात्र जी के टेम्परा शैली के रगो मे जो चमक और ताजगी होती है वह दृश्य

फारमर इन फील्ड – तेल रग 42 x 35 सेमी मदन लाल नागर

पचमढी जल रग 11 x 15 इच आर एस धीर

हिमालया तैल रग 65 x 48 सेमी बी एल शाह

चित्रो मे नही। महापात्र जी न दा तरह स –स्वतत्र रूप मे ओर अपने सयोजनो/विषया के एक अ ा क रूप म दृश्या को अकित किया हे। इनमे वातावरण का प्रभाव भी उल्लखनीय हे जसे वर्षा कुहासा बदली धूप–छाव सूर्योदय–सूयास्त बसन्त फागुन आदि। प्रिय माध्यम जलरग आर पन/इक था पर तेल टम्परा पेस्टल आदि माध्यमो म भी काय किया हे।

महापात्र जी क समकालीन कलाकार प्रा रणवीर सिह बिष्ट का नाम इस कला धारा के सवाधिक सशक्त स्तम्भ क रूप मे लिया जाता हे। बिष्ट जी के साथ दो बिन्दु महत्वपूर्ण थे एक तो विरेश्वर सेन जी के शिष्य क रूप मे उनके द्वारा पोषित कलाधारा को नया आयाम देते हुए समकालीन कलाधारा मे एक स्थान दिलाया। दूसरे समकालीन कलाधारा के परिवतित होते परिदृश्य को गहनता से समझकर प्रयोगवादी कला को प्रोत्साहित किया और लखनऊ को महत्व दिलाया। विरेश्वर सेन ने विजिटिग कार्ड और पोस्टकार्ड आकार म ही निसग को बाधना चाहा। उनका प्रिय माध्यम भी जलरग ही था पर बिष्ट जी ने तैल माध्यम को जल की तरह ही प्रयोग कर भू–दृश्य चित्रकारी को एक दिशा दी। उन बधनो से मुक्त कराया जो भारतीय कला व्याकरण या पाश्चात्य अकादमिक शिक्षण स्वरूप के अतर्गत वर्चस्व बना रही थी। हिमालयन व ब्लू सीरीज बिष्ट जी की महत्वपूर्ण शृखलाए है जिनम पहाडी दृश्य क्षरण (कटान) शिलाखडो का स्वभाविक रूप से विखण्डन आदि का बहुत ही गतिमयता के प्रभाव के साथ अकित किया है। जल रग के लघु चित्रो की शृखला की प्रदर्शनी भी लखनऊ की सृष्टि आर्ट गेलरी मे लगा चुके थे जिसमे प्रयोगात्मक चित्रो को महत्व दिया गया था। बिष्ट जी के दृश्य चित्रा मे अकित शिलाखण्डो की कटान और उनके टेक्सचर तथा जल बहाव के मध्य बचे शिलावशेष का गहन अध्ययन दर्शनीय होता है। प्रिय वर्ण–योजना नीले रग की थी। कभी–कभी विरोधी रग पील को इतनी खूबसूरती से लगाते थे कि सम्पूर्ण चित्र का केन्द्र बिन्दु के रूप मे वह स्थान उभर कर आता था। अतिम समय मे अन्वान्टेड चाइल्ड और उसके पहले ब्लैक–पेजेज आफ द इडियन रिपब्लिक शृखलाए तैयार की। एक सैरा चित्रकार और आध ुनिक कला प्रणेता के रूप मे बिष्ट जी का योगदान कला जगत मे अविस्मरणीय रहेगा।

इस कला धारा के प्रतिनिधि के रूप मे विरेश्वर – सेन के मार्गदर्शन मे विशेषीकरण कर चुके योगेन्द्र नाथ योगी ने यथार्थता को समर्पित रचनाए की। जलरग एव एक्रेलिक माध्यम मे योगी जी ने दृश्य चित्रण किया। यात्राओ के दौरान त्वरित गति से किए गए सक्षिप्त रेखाकन को अपने स्टूडियो मे विधिवत वर्णाकार देते है।
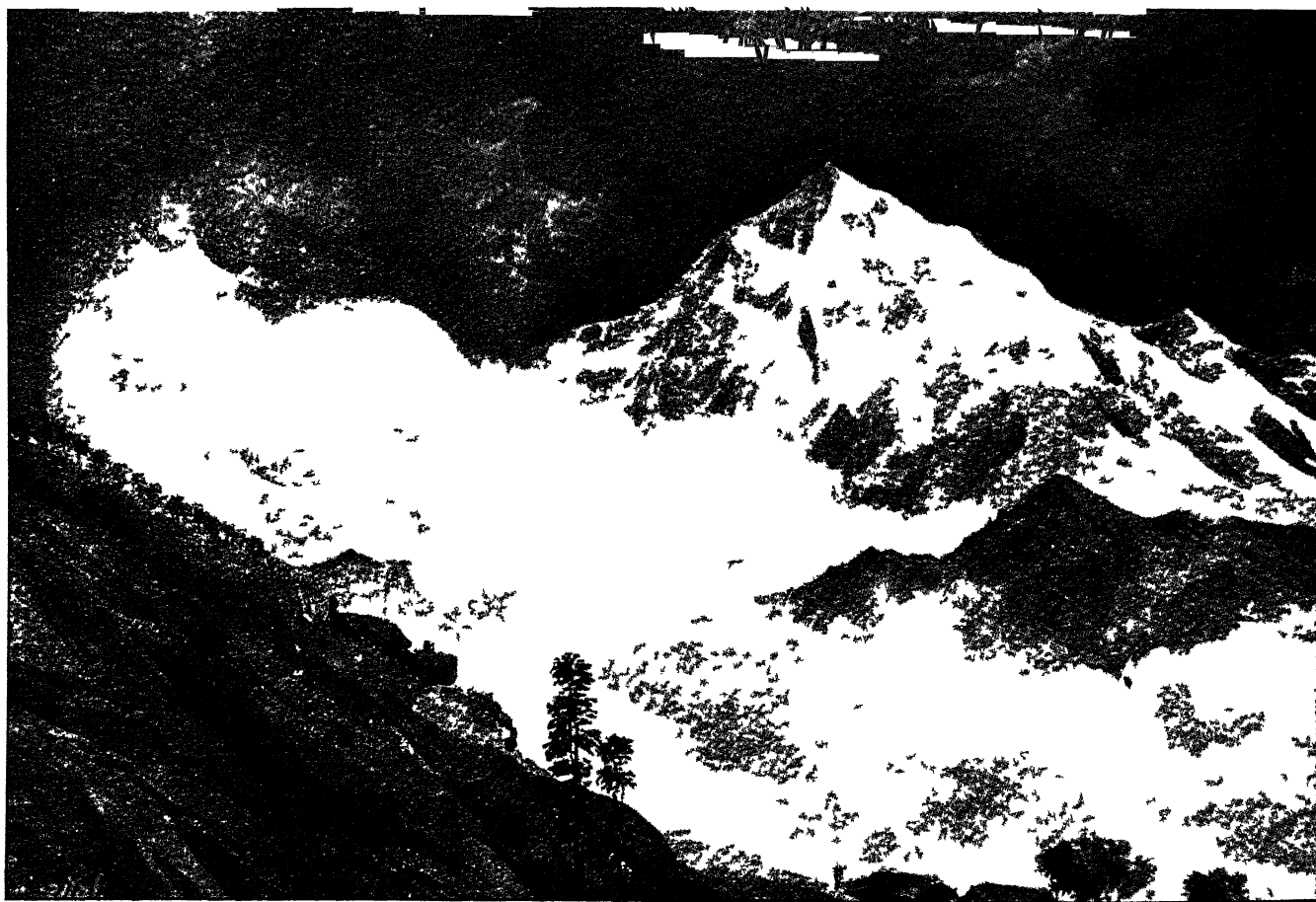
माउण्टेन – एक्रेलिक 11 x 15 इच योगेन्द्र नाथ योगी

नहे सृजनात्मक चित्रो के द्वारा राष्ट्रीय स्तर क कलाकारा मे अपनी पठ रखत ह वही यागी जी दृश्य चित्रण मे सहजीकरण आर सुग्राह्यता का महत्व देते ह। योगी जी के समकालीन कलाकार प्रो बद्रीनाथ आर्य जिन्हे वाश चित्रण शैली के प्रमुख स्तम्भ के रूप मे जाना गया प्रारभिक कला यात्रा मे दृश्य चित्रण व रेखाकन द्वारा अपनी कला को एक धरातल दिया। प्रिय–माध्यम जल आर तल रहा। लखनऊ के विशिष्ट एतिहासिक स्थलो इमारतो का चित्र गामती म रात के प्रकाश का परावर्तन कुहासा बारिश आधी आदि के प्रभावो को दृश्य चित्रण और वाश चित्र के विषयो के साथ जोडा।

लखनऊ को ही कर्मस्थली बनाए सतीश चन्द्रा ने भू–दृश्यो पर अनगिनत कृतियॉ सृजित की। इनमे जहॉ सहजता और यथार्थता दृष्टव्य है वही प्रयागात्मक चित्र भी उल्लेखनीय है। जेठ बेसाख मे खतो मे आयी खुश्की चिलचिलाती धूप मे पौधो का रग हरे से पीला ओर भूरा आदि विषयो पर सराहनीय चित्राकन हुआ है। मनाली का जल रग म खरोच कर चित्रण देवदार के वृक्षो से छनकर आती धूप मैदाना/खेतो मे खरोचकर उत्पन्न प्रभावो के मध्य हवा मे झोको का प्रभाव वृक्षो का सुन्दर अकन आदि सतीश जी की सृजनशीलता प्रवृत्ति को पुष्ट करते है। जलरग मे भी अलग–अलग प्रभावो के साथ सतीश जी ने प्रयोग किए है। उल्लेखनीय है कि जिस तरह कलाचार्य विरेश्वर सेन और प्रो बिष्ट ने दृश्य चित्रण मे प्रयोगात्मक कार्य करते हुए कला जगत मे एक ऊचाई प्राप्त की उसी तरह सतीश चन्द्रा को भी लैड स्केप के पर्याय के रूप मे जाना जाता है। लखनऊ की अगली पीढी के कलाकारो मे राजीव मिश्र ने भू–दृश्य चित्रण मे अपनी दखल बनाई है। राजीव ने वाश चित्रण के प्रतिनिधि कलाकार के रूप मे कार्य करते हुए नये माध्यमो मे अनेक प्रयोग किए है जिसमे क्लाउड लैण्डस्केप ग्रेट पेटर आदि श्रृखलाओ की प्रदर्शनी भी आयोजित की है। एक्रेलिक मे बने लैडस्केप उल्लेखनीय है। डा शेफाली भटनागर अब लखनऊ को अपनी कर्मभूमि बना चुकी हें। लेखन के अतिरिक्त चित्रण मे भी अपनी पहचान रखती है। विषय के रूप मे पुष्प एव नैसर्गिक छटा को महत्व देती है। प्रिय माध्यम जल रग है। सम्प्रति मे अरशद अमीन अजीत सिह पकज सरोज रोली शुक्ला इस कला धारा के प्रतिनिधि कलाकार के रूप मे कार्य कर रहे है।

लखनऊ के सैरा चित्रकारो के इस क्रम मे उन कलाकारो का उल्लेख करना अति आवश्यक है जिनकी शिक्षा–दीक्षा लखनऊ के कला वातावरण मे हुई पर कर्मभूमि के रूप मे देश–विदेश के अन्य नगर रहे जहा वे लखनऊ मे विकसित इस कलाधारा का सुवास बिखेर रहे हैं।

सर्वप्रथम उल्लेखनीय है आर सी साथी का नाम जो अमेरिका मे स्थापित हो रचनारत है। साथी जी के दृश्य चित्रण मे काली रेखाओ द्वारा आकारो का अकन किया गया है तदुपरान्त उसमे सपाट रगो द्वारा एक सहजता का प्रभाव उत्पन्न किया है। ग्राम्य जीवन विषय और जल रग माध्यम विशेष रहा है। फ्रैक वैज्ली ने भी जल रग को ही प्रिय माध्यम के रूप मे प्रयोग किया। वाश चित्रण और दृश्य चित्रकारी मे उल्लेखनीय कार्य हैं। इनमे दृश्य चित्रण

लैण्डस्केप – तैल रग रणवीर सिह बिष्ट

लैण्डस्केप – तैल रग 92 x 106 सेमी सतीश चन्द्रा

लैण्डस्केप – एक्रेलिक 11 x 15 इच राजीव मिश्र

कुकरैल फारेस्ट 1996 जल रग 28 x 38 सेमी शेफाली भटनागर
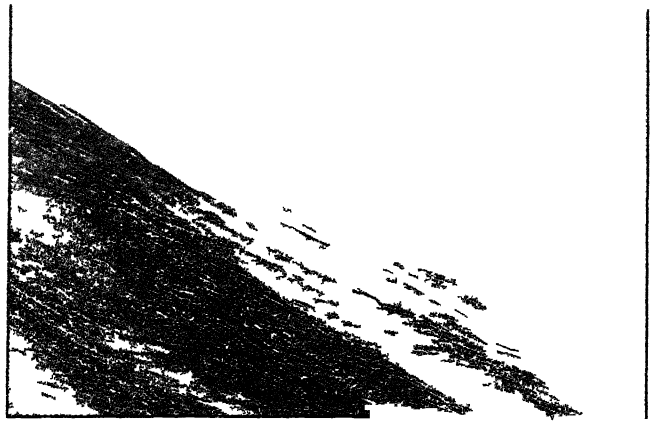
लैण्डस्केप 1999 तैल रग 22 x 28 इच अजीत सिह

स्वनत्र रूप से तथा वाश चित्रण क विषया व उसके अग के रूप म प्रयोग किए गए। इस समय आस्ट्रेलिया म भारतीय कला का प्रतिनिधित्व कर रह हे।

मोहम्मद सलीम का नाम इस क्रम म उल्लेख करना अतिआवश्यक हे। इनकी कर्मभूमि नेनीताल (सम्प्रति–अल्मोडा) रही। प्रा बिष्ट के समकालीन कलाकारो मे बिष्ट जी के साथ ही मो सलीम का नाम प्रदेश क दो विशिष्ट स्तम्भ दृश्य कलाकारो के रूप मे लिया जाता था हालाकि पूर्वाचल मे (काशी हिन्दू विश्वविद्यालय) दिलीप दास गुप्ता का नाम भी दृश्य चित्रकारो की शृखला मे ही प्रख्यात हे। मोहम्मद सलीम ने पहाडी वातावरण/प्रकृति को अपना रचना विषय बनाया ओर जलरग तथा एक्रेलिक मे विविध प्रयोग किए। जहा बिष्ट न केवल पहाड/शिलाओ पर केन्द्रित रह शृखलाए तैयार की वही सलीम ने पहाडी ग्राम्य जीवन बाढ नगर का दृश्य धूप रात आदि मे उसके प्रभाव आदि को अनुभव किया और अपनी सृजनात्मकता की धार पैनी करते हुए रचा।

रघुवीर सेन धीर (काशी हिन्दू विश्वविद्यालय) ने वाश चित्रण के

प्रिसिपल बैंग्लो पेन एण्ड वाश 11 x 15 इच रोली शुक्ला
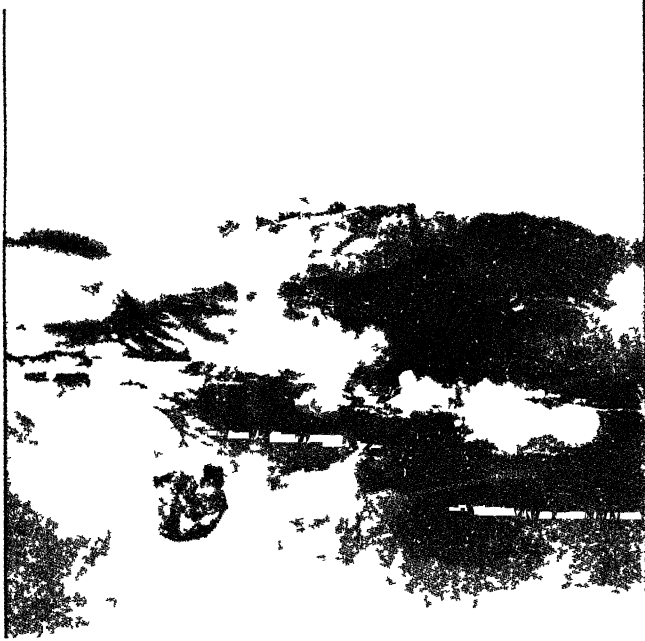
रिमोट हिल विलेज तैल रग 118 x 118 सेमी मो सलीम

लैण्डस्केप इन ब्लू, तैल रग 60 x 75 सेमी खलिक अश्फाक
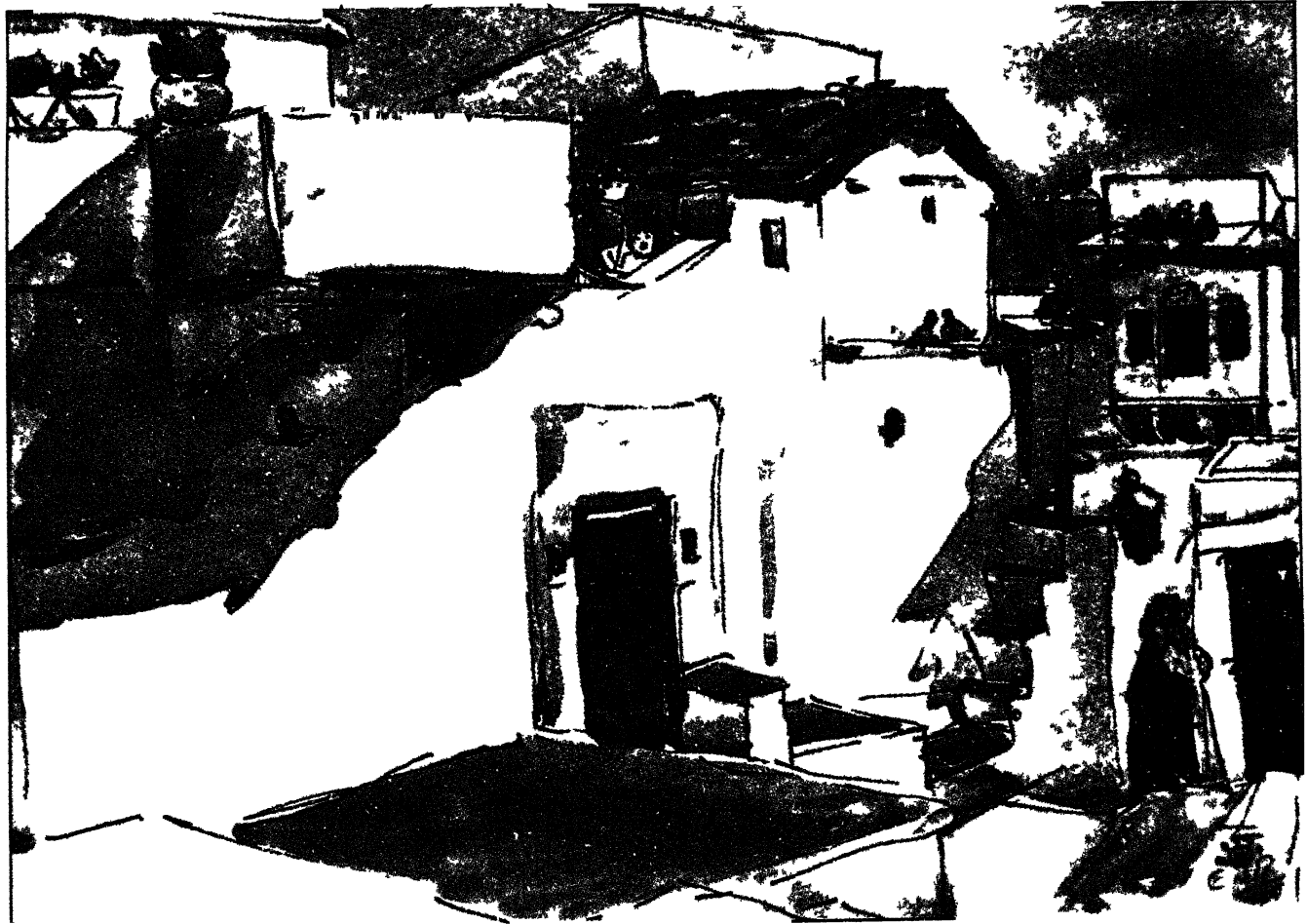
अम्बापोल जल रग 37 x 30 सेमी आर सी साथी

दृश्य चित्र – जल रग 38 x 57 सेमी नित्यानद महापात्र
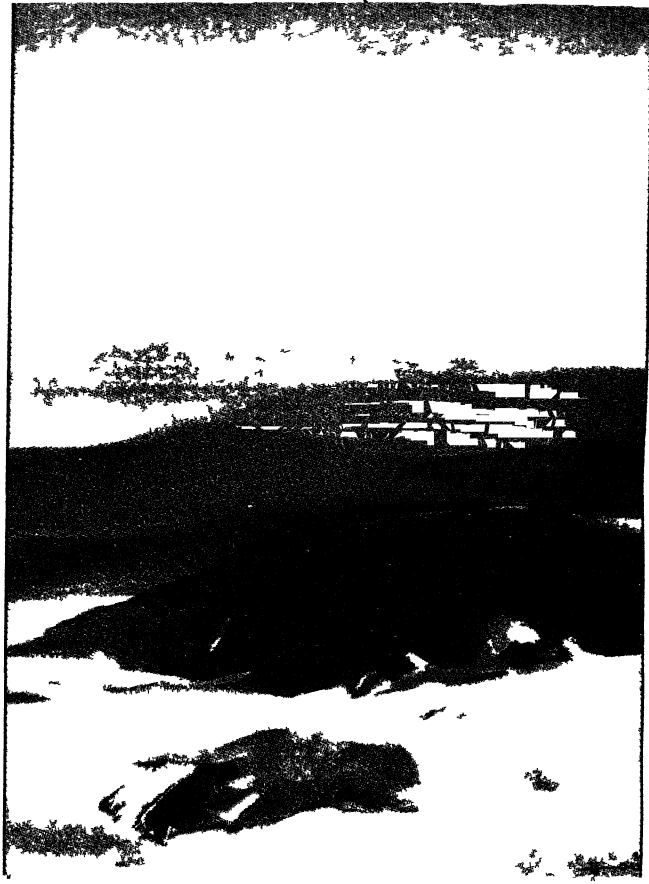
लैण्डस्केप तैल रग 18 x 22 इच हरीश श्रीवास्तव

विषयो और स्वतत्र रूप से भी जल रगो के माध्यम से दृश्य चित्रण मे अपनी ग्रहणशीलता और अनुभव को अभिव्यक्त किया। ये चित्र प्राय यथार्थता को समर्पित है। पचमढी और उत्तराचल की वादियो के विभिन्न दृश्य लोक जीवन और प्रकृति का चरित्र आदि के विभिन्न पहलुओ को अन्वेषित किया। इन विषयो को जलरग पोस्टर रग कम्प्यूटर आदि द्वारा अभिव्यजित कर अपनी खोजी प्रवृत्ति को तृप्त करने का प्रयास किया।

हरीश श्रीवास्तव और आर बी सेठ की कर्मभूमि दिल्ली रही और रचना जगत मे दोनो की अपनी पहचान/मौलिकता है। हरीश श्रीवास्तव ने परिपक्व वर्ण–योजनान्तर्गत टूटते/ चिटकते शिलाखडो या उसमे पड रही दरारो का विशेष अध्ययन कर अभिव्यजित किया। सुखद वर्णों को विरोधी रगो द्वारा सतुलित करने मे हरीश जी दक्ष कलाकार हैं। सम्प्रति मे अपनी रचना शैली परिवर्तित कर अति सहजता की ओर उन्मुख है पर लखनऊ के कला सस्कार की सुगन्ध को अनुभव किया जा सकता है। आर बी सेठ ने जलरग मे विविध प्रयोग कर टेक्स्चर को महत्व दिया है। समकालीन कला के परिप्रेक्ष्य मे इन अमूर्तनोन्मुख दृश्य चित्रो का अत्यधिक महत्व है। एच जी प्राइस खलीक अश्फाक बी एल शाह आदि उल्लेखनीय कलाकार है जिन्होने लखनऊ के बाहर जाकर यहॉ के दृश्य चित्रण कला का प्रचार प्रसार किया।

जहा पारपरिक लोक ग्राफिक समकालीन आदि कला धाराओ का लखनऊ की चित्रकला मे विशेष महत्व है वही अकादमिक शैली की उप धारा के रूप मे सैरा चित्रो (भू–दृश्य चित्रकारी) का अपना इतिहास रहा है और कला मे पुनरूत्थान से लेकर समकालीन कला की प्रमुख धारा से सम्बद्ध होते हुए अब तक इस विशिष्ट कला धारा की अपनी पहचान यथावत है। लखनऊ मे इन सैरा चित्रकारो के प्रतिनिधि के रूप मे अनेक उदीयमान कलाकार इस धारा से सबद्ध हो रहे है जो लखनऊ की कला के भौतिक गुणो का पराग भूमण्डलीय स्तर पर बिखेरते हुए नवाबो के शहर/लक्ष्मणपुर को गौरवान्वित करते रहेगे।

चित्र साभार – प्रदर्शनी कैटेलॉग – श्री हरीश श्रीवास्तव (दिल्ली) श्री नित्यानन्द महापात्र (लखनऊ) प्रो आर एस धीर (वाराणसी) प्रो योगेन्द्र नाथ योगी (लखनऊ) प्रो विमला बिष्ट (लखनऊ) डॉ शेफाली भटनागर (लखनऊ) श्री अजीत सिह (लखनऊ) श्री राजीव मिश्र (लखनऊ) सुश्री रोली शुक्ला (लखनऊ) सग्रह – राज्य ललित कला अकादमी उ प्र एक्से न – 98 925 1 68 212 1 67 113 1 68 232 1 89 648 1 71 325 1 67 79 1 97 797 1 72 358 1

प्रकृति काष्ठ छापा 23 x 36 श्याम शर्मा

आधुनिक कला आन्दोलन

पारम्परिक आकृतिमूलक (वस्तुगत) चित्रो मे अमूर्त का वस्तु निरपेक्ष कला तक का सफर

*प्रो चिन्मय मेहता **

कला मे परिवर्तन एक निरन्तर प्रक्रिया है जो आदि काल से चली आ रही है। इतिहास साक्षी है कि मानवीय सभ्यता को कुछेक युगो से चौकाने वाले परिवर्तनो का सामना करना पड रहा है। इन युगो को हम क्रान्तिकारी युग की सज्ञा देते है जो ऐसी दिशा देते है कि वह ऐतिहासिक मोड के रूप मे मानी जाती है। शास्त्रीय कला के बाद पश्चिम मे रेनासॉ को भी क्रान्तिकारी युग माना गया था किन्तु पिछली दो शताब्दियो को मानवीय सभ्यता मे इतिहास मे सर्वाधिक क्रान्तिकारी युग माना जायेगा।

साधारण पीढियॉ यथास्थिति और प्रचलित मान्यताओ को स्वीकारती हुई जीती जाती है। किन्तु कुछ अधिक विचारशील एव सजग लोग और उनका अनुसरण करती पीढियॉ प्रचलित मान्यताओ को अस्वीकार कर नई दिशा एव नये मूल्यो की ओर समाज को ले जाना चाहती है यही से क्रान्ति का आरम्भ माना जाता है। उच्च स्तरीय वैज्ञानिक खोजो से प्रेरित तकनीकी विकास से अति प्रभावित औद्योगीकरण ने हमारी सामाजिक तथा सास्कृतिक सरचनाओ मे क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिये है। हमारे सम्पूर्ण दृष्टिकोण को बदल दिया है।

आधुनिकता का आन्दोलन स्थापित मूल्यो परम्पराओ एव मान्यताओ के विरोध रूप मे आरम्भ हुआ था। प्रचलित परम्पराओ पर प्रश्न खडे किये गये– उनका पुनर्आंकलन किया गया। नयी दिशाए खोजने की तडप का नाम आधुनिकता है। आज भी हम तेजी से भागती हुयी तकनीकी प्रगति के साथ कदम मिलाकर भागने का प्रयास कर रहे है सामाजिक तथा सास्कृतिक अनुकूलन दुरुह और असम्भव होता जा रहा है एव परिणामस्वरूप अनेक विरोधाभास विसगतियॉ भी आधुनिक सभ्यता की सबसे बडी त्रासदी हैं। इस बीच कभी पारम्परिक एव पुरातन के प्रति आसक्ति भी जगती है। किन्तु उस शान्ति एकता एव सन्तुलन की आशा अब स्वप्न है वास्तविकता नही क्योकि उसकी पूर्व स्थापना भी असम्भव हो गयी है।

आधुनिकता एव आधुनिक कला को भलीभॉति समझने के लिए इस पृष्ठभूमि को समझना अनिवार्य है जो इस सम्पूर्ण क्रान्ति की परिकल्पना आधारभूत प्रेरणा है।

फ्रास की औद्योगिक क्रान्ति ने कई सामाजिक राजनैतिक विचारो का सूत्रपात किया था। सामन्ती व्यवस्था का विरोध होने लगा। प्रजातत्र स्वतन्त्रता तथा समानता का बिगुल बजने लगा। हर जगह वैचारिक मुक्ति और स्वच्छन्दता का समय था। नया सोचना तथा नवीनता के प्रति आग्रह महत्वपूर्ण सास्कृतिक मूल्य बनता जा रहा था। हम सामूहिक पहचान से हटकर वैयक्तिक मोलिकता से आकृष्ट होते जा रहे थे। उधर साम्यवाद नयी सामाजिक व्यवस्था की ओर सलीन था। धर्म की सत्ता भी क्षीण होती जा रही थी । जो कला एव साहित्य धार्मिक आन्दोलनो की सहचर होकर सृजनशील थी वह मुक्त होकर नये विषय वस्तु खोजने लगी।

इसी तरह कला सामन्ती अभिजात्य प्रभावो एव नियत्रणो से स्वतत्र होती जा रही थी सृजनकारो की दृष्टि दरबारो राजपरिवारो से हटकर सामान्य जन–जीवन पर केद्रित होने लगी थी। धार्मिक पौराणिक एव मिथकीय कल्पनाओ से मुक्ति पाने के लिये ही चित्रकार कुर्बे ने कहा था कि मैं देवदूत चित्रित नही करूँगा। क्योकि मैने देवदूत कभी नही देखे। मै वही चित्रित करूँगा जो मैं देखता हूँ।

आधुनिक कला का सम्पूर्ण आन्दोलन प्राचीन स्थापित कला मूल्यो के विरोध से शुरू हुआ था। परम्परा का तिरस्कार आधुनिकता का मूल मत्र था।

कला की ऐसी परिभाषा जो प्रकृति के अनुकरण' को आदर्श मानती थी उसमे सृजनकारो मे सशय एव अनास्था कला थी। कला प्रकृति का अनुकरण है' इसके विचारक प्लेटो या अरस्तू ने सभवत यह कभी नही सोचा होगा कि पश्चिमी कला सदियो तक प्रकति के वस्तुगत अकन को आदर्श मानकर सीमित सकुचित होकर रह जायेगी चित्र प्रकृति' का दर्पण होकर रह जाएगा पश्चिम के आकति मूलक चित्रो को देखकर लगता है कि दर्शक किसी प्राकृतिक दृश्य के सामने खडे है। चित्र की द्विआयामी सतह पर त्रिआयामी भ्रम रूपायित करना तथा वस्तुओ को ठोस आकारो सा चित्रित करना परम आदर्श माना जाता रहा। प्रकृति के प्रति कति ने कला के अन्य महत्वपूर्ण तत्वो एव आयामो से उसे अछूता रखा।

देखा जाय तो यथार्थवादी –वस्तुगत रूपाकन से मुक्ति ही आधुनिक चित्रकला का परम लक्ष्य था।

चित्र की एक 'स्वागत' सत्ता हो सकती है जो प्रकृति के दृश्यगत सत्य से भिन्न हो सकती है। चित्र के 'रूप का प्रकृति के आकारो पर आधारित होना अनिवार्य नही है। रोमान्सवाद यथार्थवाद से कला को सुन्दर कल्पनाओ फन्तासियो की ओर ले गया था। किन्तु चित्राकन की तकनीक मे कोई मूलभूत परिवर्तन नही आया।

* प्रोफेसर एव विभागाध्यक्ष ललित कला विभाग राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर

दृश्य चित्र तैल माध्यम 75 x 75 सेमी दिलीप दास गुप्ता

पारम्परिक दृश्यो एव चित्राकन मे परिवर्तन की शुरूआत की थी प्रभाववादियो ने जो वस्तुगत रूप से अधिक उसके वातावरणीय या प्रकाशमय प्रभाव को चित्रित करने मे अधिक रूचि लेने लगे परन्तु त्रिआयामी रूप पर प्रहार होने लगा था। वस्तुओ का चित्राकन द्वि–आयामी रूपाकन की ओर अग्रसर हो रहा था। चित्रकार के लिए महत्वपूर्ण नही था कि वस्तुये कैसी दिखती है? यह अधिक महत्वपूर्ण है चित्रकार उसे कैसे देखते है तथा कैसे उसे अकित करते है। इसी से वैयक्तिक पहचान मौलिक शैली के विकास पर जोर बढा। चित्रकार एक सामूहिक चित्रोमय भाषा से हटकर अपनी मौलिक भाषा खोजने मे लग गये। यही से एक सामूहिक परम्परा मे कार्य करने का प्रचलन समाप्त होने लगा। दृष्टिकोण मे समानता होते हुए भी उत्तर प्रभाववादी चित्रकार वैन गो सेजा से पूर्णतया भिन्न थे। स्थिति ऐसी आई कि प्रत्येक चित्र एक नवीन शैली का स्थान ग्रहण करने लगा। सेजा को आधुनिक कला का पिता माना जाता है। वे प्रकति का अकन ज्यामितीय आकारो के माध्यम से करना चाहते थे। यह अपने आप मे एक कान्तिकारी विचार था जिसने वस्तुनिष्ठ चित्राकन की परम्परा पर प्रहार कर दिया तथा इस धारणा ने चित्र की भाषा को ही बदल दिया। अब पेड एक पत्तो डालियो और तनो का यथार्थवादी अकन न होकर खडित विभाजित आयतो और त्रिकोणो का सयोजन था। घनवाद ने चित्रो को द्विआयामी अमूर्तन की ओर अग्रसर किया। अमूर्त कला की शुरुवात घनवाद से हो गई थी। चित्र अब शुद्ध रूपवादी गुणो की ओर आगे बढे रहे थे।

पिकासो वस्तुओ के प्रथम निरीक्षण का उनसे युक्त होकर आगे बढने का माड (Turning point) मानते थे। वस्तुगत सत्य स आप जितना दूर होते जाएगे चित्र उतना ही सृजनात्मक्ता की ओर बढने लगेगा तथा इसमे नई सृष्टि दृश्यमान होने लगेगी। चित्रकार चित्र की रचना मे भावाभिव्यक्ति को अत्यन्त महत्वपूर्ण मानने लगे तथा तद्नुसार आकारो को तोडने मोडने लगे। इसी नये सृजन की खोज मे चित्र प्राकतिक आकारो से भिन्न नवीन चाक्षुकीय अनुभवो का क्रीडा स्थल बन गये चित्र की नई परिभाषा के अनुसार अब यह अनिवार्य नही है कि चित्र मे प्रकति की कौन सी आकृति विद्यमान है बल्कि चित्रकार की चुनौती यह है कि वह किस नये चित्रोपन्न सयोजन के माध्यम से एक नयी सृष्टि का सृजन कर रहा है जिससे पहले कभी साक्षात्कार नही हुआ।

अमूर्तवादी एव वस्तु निरपेक्ष चित्रकारो ने ऐसी चित्र ग्चनाए रची है जो चित्र की स्वतत्र एव स्वायत्त सत्ता का हमारे सामने नये चाक्षुकीय एव दृश्य प्रभाव को प्रस्तुत करती है यही आधुनिक कला की परिणति है।

चित्र सभार – राज्य ललित कला अकादमी उप्र एक्स न – 99 931 1 व्यक्तिगत सग्रह – प्रो श्याम शर्मा (पटना)
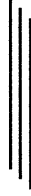
जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (डी पी ई पी)
जनपद बरेली की प्रगति

1 जनपद बरेली मे 141 प्राथमिक विद्यालय निर्माणाधीन।
2 जनपद मे 307 मे 206 अतिरिक्त कक्ष का निर्माण पूर्ण।
3 जनपद मे 144 न्याय पचायत ससाधन केन्द्रो का निर्माण पूर्ण।
4 जनपद मे 695 शौचालयो मे से 500 शौचालयो का निर्माण पूर्ण।
5 जनपद मे 05 वैकल्पिक शिक्षा केन्द्र तथा 74 शिशु शिक्षा केन्द्र सचालित।
6 जनपद मे अनुसूचित जाति/जनजाति के सभी बालक/बालिकाओ को तथा सभी वर्ग की लडकियो को कक्षा 01–05 तक की पुस्तको का नि शुल्क वितरण।
7 जनपद मे सत्र 2000–2001 मे अब तक 06–14 वय वर्ग के लगभग एक लाख बच्चो का नामाकन हुआ।

दीपचन्द्र
विशेषज्ञ बेसिक शिक्षाधिकारी बरेली